ॐ

राम संदेश

भक्ति, ज्ञान एवं कर्मयोग की आध्यात्मिक पत्रिका

पावन हों शिक्षा संस्कार
शुद्ध आचरण का आधार

काम काज हो या व्यापार
सभी जगह अच्छा व्यवहार

मित्र पड़ोसी घर परिवार
संबंधों में निश्छल प्यार

यदि हो पाएं तो संसार में
होगा सुख शांति प्रसार

वर्ष 65 जुलाई-सितम्बर 2017 अंक 3

रामाश्रम सत्संग, गाज़ियाबाद

विषय सूची

क्रमांक **पृष्ठ**

1. भजन---------- 01
मीराबाई

2. श्रीमद्भगवद्गीता की व्याख्या---------- 02
लालाजी महाराज

3. मनमानी मत करो ---------- 07
डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज

4. उपदेश---------- 11
अनमोल वचन

5. तीन प्रकार के चरण ---------- 14
परमसंत डॉ. करतार सिंह जी साहब

8. फजल अयाज ---------- 19
प्राचीन मुस्लिम संतों के जीवन चरित्र

9. ईश्वर प्राप्ति के उपाय ---------- 34
प्रवचन स्वामी श्री भूतेशानन्द, रामकृष्ण मिशन

10. अन्तकाल---------- 39
श्री भुवनेश्वर नाथ वर्मा, भभुआ

11. सच्चा वैष्णव ---------- 42
श्री भजन शंकर, गुड़गांव

12. शोक समाचार---------- 43

राम ॐ संदेश

संस्थापक

ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज

संरक्षक

ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी

सम्पादक

डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना

(सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष)

वर्ष 65 जुलाई-सितम्बर 2017 अंक-3

बिनती

मैं अपराधी जनम का, नख सिख भरा विकार।
तुम दाता दुख भंजना, मेरी करो संभार।।

अवगुन मेरे बाप जी, बकस गरीब निवाज।
जो मैं पूत कपूत हौं, तऊ पिता को लाज।।

साहिब तुम जनि बीसरो, लाख लोग लगि जाहिं।
हम से तुमरे बहुत हैं, तुम सम हमरे नाहि।।

कर जोरे विनती करौं, भवसागर आपार।
बंदा ऊपर मिहर करि, आवागमन निवार।।

– कबीर

परमसंत महात्मा रामचन्द्र जी महाराज

श्रीमद्भगवद्गीता की व्याख्या

(पिछले अंक से आगे)

66

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।। 12 ।6।

अर्थः– परन्तु जो मेरे परायण होकर (समर्पित) सब कर्मों को मुझमें अपर्ण करके अनन्य योग से ध्यान, उपासना करते हैं।

भावार्थः– साकार और निराकारवादी दोनों में से जो पूर्ण समर्पण किये हुए ध्यान, उपासना योग में अनन्य (निरंतर) लगे हैं।

67

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्यु संसारसागरात्।
भवामि न चिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम्।। 12 ।7।

अर्थः– हे अर्जुन मुझसे आवेशपूर्वक चित्त को लगाने वालों को मैं शीघ्र ही मृत्यु संसार सागर से पार कर देता हूँ।

भावार्थः– उनमें से जो मुझमें आवेशपूर्वक (पूर्ण प्रयत्न लगन और श्रद्धा पूर्वक) लगे हैं उनका उद्धार मैं शीघ्र कर देता हूँ। जिनके प्रयत्न, श्रद्धा में कमी है (या दिखावा अधिक है) वे इसमें नहीं आ पायेंगे।

68

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते
ध्यानात्कर्म फलत्यागस्त्यागाच्छां तिरनन्तरम्।।12। 12।

अर्थः– अभ्यास से ज्ञान श्रेष्ठ है, ज्ञान से ध्यान विशेष (फलकारी) है। ध्यान से (कर्मफल) त्याग श्रेष्ठ है क्योंकि त्याग से तुरंत शाँति प्राप्त होती है।

भावार्थः– अभ्यास भले ही अनियमित (श्रद्धा, विश्वास नियम की कमी के साथ) हो उससे अधिक ज्ञान (प्रभु के अस्तित्व व उनको प्राप्त करने के

उपायों के ज्ञान) और उससे उनका ध्यान श्रेष्ठ है और ध्यान से भी उत्तम (सब कर्मो के फल का) त्याग श्रेष्ठ है क्योंकि उससे तुरंत शाँति मिलती है। यहाँ त्याग सांसारिक खाने, पीने आदि का त्याग नहीं कहा है।

69

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी।। 12।13।

अर्थः– जो सब जीवों में द्वेष रहित मैत्री और करुणा भाव वाला तथा ममता, अहंकार से रहित सुख दुख में सम योगी निरंतर लगा है।

भावार्थः– द्वेष, ममता, अहंकार, उद्वेग, क्रोध रहित होना (सुख दुख में सम होना), क्षमावान, मैत्री करुणा भाव वाला होना ये सर्वगुण दोनों प्रकार की उपासना (साकार या निराकार) में आने चाहिए।

70

संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ।। 12।14।

अर्थः– निरन्तर संतुष्ट, दृढ़ निश्चय वाला, मुझमें अर्पित मन और बुद्धि वाला मेरा भक्त मुझे प्रिय है।

भावार्थः– जो द्वेष, ममता, क्रोध से रहित होगा वो निरन्तर संतुष्ट होगा (तथा उस ऐसे वाले में से) दृढ़ निश्चयी, प्रभु में समर्पित मन, बुद्धि वाला होगा तो वो प्रभु को प्रिय है।

71

मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी।
विविक्त देशसे वित्वमरतिर्जनसंसादि।। 13। 10।

अर्थः– मुझमें अनन्य योग द्वारा अव्यभिचारिणी भक्ति तथा एकान्तसेवी तथा जनसमूह में रति (आसक्ति) रहित।

भावार्थः– भगवान अपने में अनन्य योग (निरन्तर लगे हुए) अव्यभिचारिणी भक्ति (आज किसी देवता या गुरु के साथ, कल किसी और

के साथ निरन्तर बदलने वाली व्यभिचारिणी भक्ति कहलाती है, उसके बग़ैर), एकान्तसेवी, समाज से विरक्त (यानी अपनी धुन में रमा हुआ समाज से अलग–थलग)

72

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा।। 13।11।

अर्थः– आध्यात्म ज्ञान में नित्य स्थिति और तत्वज्ञान के दर्शन आदि सब ज्ञान हैं। इससे अन्य सब अज्ञान है।

भावार्थः– पिछले और इस श्लोक में ज्ञान की परिभाषा बताई है। निरंतर चिंतन, अव्यभिचारिणी भक्ति, एकान्तसेवी, सबसे अलग–थलग, तत्वज्ञान का खोजी ही असली ज्ञान की परिभाषा में है अन्य नहीं।

73

बहिरन्तश्च भूता नामचरं चरमेव च।
सूक्ष्मत्वात्त्दविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत्।। 13 ।15।

अर्थः– वह परमात्मा सब जीवों के बाहर, भीतर और चर, अचर रूप में तथा सूक्ष्म होने से अविज्ञेय है तथा दूर व अति समीप भी है।

भावार्थः–भगवान के सर्वव्यापी रूप अणो अणीयान और महतो महीयान का यहाँ वर्णन है कि वो सब जीवों के भीतर, चर और अचर सबमें है तथा सबके बाहर है अतः उसमें सब हैं। जैसे खाली कलश में आकाश है और उसके चारों ओर आकाश है अतः कलश आकाश में है।

74

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम्।। 13।17।

अर्थः– वह परब्रह्म ज्योतियों का भी ज्योति, माया से अनन्त परे कहा जाता है। वही ज्ञान जानने योग्य और ज्ञान का लक्ष्य सबके हृदय में स्थित है।

भावार्थः– चार मुख्य बातें यहाँ परम ब्रह्म के बारे में कही हैं। 1. वह ज्योतियों का भी ज्योति सहस्त्रों सूर्यों के समान है। 2. जो कुछ भी इन्द्रियों मन, बुद्धि से प्राप्त ज्ञान है वह प्रभु की माया के अंदर ही है। उससे परे ऋतंभरा प्रज्ञा तीसरी आंख का ज्ञान माया से परे का ज्ञान है। 3. वह ज्ञान जानने योग्य यानी उचित ज्ञान है और सब ज्ञानों का लक्ष्य होकर सबके हृदय में स्थित है।

75

कार्यकरणकर्तृत्वे हेतुः प्रकुतिरुच्यते।
पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते।। 13।20।

अर्थः– कार्य (शरीर) और करण (इन्द्रियाँ) प्रकृति के कारण हैं और उनमें पुरुष (जीवात्मा) सुख दुख भोगता है।

भावार्थः– प्रकृति एवं पुरुष का चित्रण यहाँ अति सुन्दर है। शरीर इन्द्रियों का धारक है। हर इन्द्री जैसे आँख, कान, नाक आदि शरीर में स्थित हैं। ये स्वयं कुछ नहीं कर सकते। परन्तु इनके द्वारा ही मन सब काम करवाता है। ये सब प्रकृति के कारण हैं (प्रकृति के लिए हैं, के हैं) मन जब आत्मा (पुरुष) के अधीन हो जाये तो पुरुष सुख इन्हीं शरीर और इन्द्रियों से भोगता है और यदि आत्मा के अधीन न हो तो इन्हीं प्रकृति से वो दुख भोगता है। आत्मा (पुरुष) से अन्य जो कुछ भी है वह प्रकृति है। अर्थात् परमात्मा से अन्य कोई विचार भी हो तो यह प्रकृति (माया) के अंदर है। मन, पुरुष और प्रकृति के बीच सेतु के समान है।

76

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः।
यः पश्यति तथात्मानमकर्तारिं स पश्यति।। 13।26।

अर्थः– और जो कर्मो को सब प्रकार से प्रकृति के द्वारा किया जाता हुआ देखता है और आत्मा को अकर्ता देखता है। वही सही है।

भावार्थः– हर समय यह विश्वास लाना कि सारे कर्म शरीर और इन्द्रियों द्वारा ही हो रहे हैं और उन्हें प्रकृति ही करवा रही है, आत्मा (पुरुष) उनसे अलग–थलग हैं सबसे अच्छा विरक्ति (कमजंबीउमदज) का मार्ग है।

77

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति।
तत एव च विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा।। 13।30।

अर्थः– जैसे ही जीव के पृथक–पृथक भावों (क्रिया व कर्मों को) को एक प्रभु में स्थित तथा उस परमात्मा को सारे विस्तार (पसारों) में देखता है, तभी वह ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है।

भावार्थः– परमात्मा को प्राप्त होने की अवस्था का निश्चयात्मक लक्षण यहाँ कहा है कि वह साधक सर्वखल्विदं ब्रह्म च तदन्तरं ब्रह्म यानी सब कुछ प्रभु में और सब कुछ में प्रभु को ही देखता है, अनुभव करता है, पाता है। ऐसा अनुभव करने वाला स्वयं ब्रह्ममय हो जाता है।

78

यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत।। 13।32।

अर्थः– हे अर्जुन जैसे एक ही सूर्य सारे ब्रह्माण्ड को प्रकाशित करता है उसी प्रकार एक ही आत्मा (क्षेत्री) सारे क्षेत्र को प्रकाशित करता है।

भावार्थः– यहाँ ''पिण्डे सो ब्रह्माण्डे'' का सिद्धान्त प्रगट हो रहा है। सारे ब्रह्माण्ड रूपी क्षेत्र को सूर्य प्रकाशित करता है जैसे सारे शरीर (क्षेत्र) को उसमें विद्यमान क्षेत्री (आत्मा) प्रकाशित करती है, चलायमान रखती है। ब्रह्माण्ड के लिए जो सूर्य है वही शरीर रूपी पिण्ड के लिए आत्मा है। उसी प्रकार सिर ब्रह्माण्ड का रूप है तो धड़ पिण्ड है।

प्रवचन गुरुदेवः डा.श्रीकृष्ण लालजी महाराज

मनमानी मत करो

ईश्वर की भक्ति सभी में है और सभी ईश्वर की प्राप्ति कर सकते हैं लेकिन मन विघ्न डालता है, इसलिए मन से सावधानी रखनी चाहिये यानी जो मन को भाये वह ही नहीं करना चाहिये। इससे मन शक्तिशाली और मोटा होता जाता है। बाप को बेटे से मौहब्बत होती है और वह सदा उसका फायदा चाहता है। उसको नसीहत भी उसी काम को करने की करता है जिसमें उसका भला हो।

जो बाप ईश्वर का भक्त है तो यह जरूरी है कि मामूली आदमियों के मुकाबले में उसकी बुद्धि ज्यादा शुद्ध हो चुकी है और वह बहुत दूर तक की सोच सकता है जिसे आम आदमी नहीं सोच सकते। जब आपने यह मान लिया कि यह हमारे हितैषी हैं, जो बात कहेंगे हमारे हित की कहेंगे, तो फिर मनमानी नहीं करनी चाहिये। जब दुनियाँ के मामलों में आप हमारी बात नहीं मानते तो फिर परमार्थ के मामलों में क्या मानोगे। बात क्या है– आपका मन बीच में विघ्न डालता है।

मान लीजिये कोई बात आपके आचार्य ने आपसे कही या किसी के जरिये अपने ख़्याल को जाहिर किया तो अच्छाई इसी में है कि उसे मान लेना चाहिये। अपनी अक्ल से उसे परखना नहीं चाहिये। गुरु जो कुछ करेगा आपके फायदे के लिए करेगा। अगर उसकी बात को नहीं मानोगे और बुरा मान कर बैठ जाओगे तो फायदा क्या होगा ? देखने में आता है कि उसकी बात को मानते वहाँ तक हैं, जहाँ तक आपका मन क़बूल करता है। गुरु के मुकाबले अपने मन को ज़्यादा महत्वपूर्ण मान लिया है और मन को ही अपना दोस्त समझ रखा है। लेकिन यह भूलते हो कि मन ही दुनिया में ले जाकर फँसाता है। जब मन को ही दोस्त मान रखा है, उसी का कहना

करते हो तो इस दुनियाँ से निकलोगे कैसे ? अगर गुरु को अपना सच्चा हितैषी मानते हो तो उसकी बात भी मानो।

ऐसे भी लोग हैं जिनके पास धन की कमी नहीं है। अगर वह घर बैठ कर भी खायें तो शायद उनकी तीन पीढ़ियाँ भी उसे खतम न कर सकें। फिर भी रुपए में फँसे हैं, परमार्थ क्या कमायेंगे ? जिसे अपने कुटुम्ब का पालन–पोषण करना है उसे तो नौकरी या तिजारत वगैरह करनी ही पड़ेगी। उसकी बात अलग है। लेकिन नौकरी–पेशा या दुकान करने वालों को भी दुनियाँ में, अपने पेशे में ईमानदारी से बरतना चाहिये। क्या आजकल नौकरी और दुकानदारी में ईमानदारी है ? कोई भी अपना काम साफ नियत से नहीं करता और अगर करने की कोशिश भी करे तो लोग करने नहीं देते। खैर, किसी हद तक यह भी क्षमा के योग्य है। लेकिन जिनके पास बहुत काफी धन–जायदाद है और फिर भी वो फँसे हुए हैं, वे मन के गुलाम हैं, परमार्थ कैसे कमायेंगे ? किसी संत ने कहा है–

'खुदा खुदा भी करे और खुदी का दम भी भरे।
बड़ा फरेबी है, झूठा है वो खुदाई का'।

दुनियाँ तो छोड़ना नहीं चाहते, एक कदम आगे नहीं बढ़ाना चाहते और चाहते हो तरक्की हो। कैसे हो ? जब तक खुद कोशिश नहीं करोगे तब तक गुरु–कृपा और ईश्वर–कृपा नहीं होगी। हम चाहते हैं कि हमारे सभी सत्संगी भाई यह समझ जायें। तुम उस मामले में जो परमार्थ की तरफ ले जाता है कुछ सुनना नहीं चाहते, करना तो अलग रहा। भक्ति कैसे होगी ? फिर शिकायत करते हो तरक्की नहीं होती।

इस दुनियाँ में हर चीज का बदला है। तुमने दान किया, बड़ा अच्छा किया, लेकिन क्या उसे लेने वापस नहीं आओगे ? लड़का नौकर रखा तो क्या उससे खिदमत नहीं चाहोगे ? हो गया बदला या नहीं ? अच्छे और शुभ कर्म मन को सतोगुणी बनाते हैं लेकिन सतोगुणी मन आवागमन से नहीं छुड़ाता। जो कामी, क्रोधी और लालची हैं, वे परमार्थ के लायक नहीं हैं– यह सन्तों का कहना है। फँसे तो सबसे हीन अवस्था में हो, पहुँचना

चाहते हो आसमान में। जिससे कहो कि तुम्हारी फलाँ बात ठीक नहीं है, वही नाराज हो जाता है। कोई बिरला है जिससे कहते हैं तो वह सुन लेते है वर्ना जिससे कहते हैं वह मुँह बना लेता है। कैसे तरक्की हो सकेगी ? जो गुरु के कहने पर चला, वह इस भवसागर से निकल गया। जो मन का साथी है वह गुरु का साथी नहीं। अगर तुम गुरु की सहायता करोगे तो वह तुम्हें मन के पंजे से निकाल देगा।

मोक्ष प्राप्त करने के लिए मन का मर्दन तो करना ही होगा। जब तक मन के चक्कर में फँसे हो, वह तुम्हें इस भवसागर से नहीं निकलने देगा। तमोगुणी मन जानवर बनायेगा, रजोगुणी मन दुनियाँ में लौटा कर लायेगा। मरते समय सोचोगे कि यह काम रह गया वह काम रह गया। इसी में अटक कर प्राण निकलेंगे और फिर आना पड़ेगा। सतोगुणी मन ध र्म पर जाता है। आनंद तो दिलवाता है परन्तु वह भी मोक्ष नहीं देता।

जो काम करो, निष्काम भाव से करो, कोई ख़्वाहिश मत उठाओ। यह ऊँचे अभ्यासिओं के लिये हैं। सोते वक्त सोचो ''आज कोई इच्छा उठाई'' ? अगर उठाई तो संस्कार बन गया। रात को सोने से पहले अपने मन से हिसाब लो। आगे जाकर भूख प्यास की ख़्वाहिश भी मिटा देते हैं। मिल गया तो खा लिया, नहीं मिला तो सोच लिया कि आज परमात्मा की मर्जी नहीं थी, और उसी हालत में खुश रहे। असली गुरु तो तुम्हारे अन्दर है, उसी से हिदायत मिलती है। लेकिन जब तक वहाँ पहुँच नहीं हैं, तब तक बाहरी गुरु से मदद लो और उसके कहने पर चलो।

जो आता है दुनियाँ के लिए ही रोता आता है। सन्तों के यहाँ दुनियाँ नहीं मिलती। वे तो दुनियाँ उजाड़ते हैं। यह अलग बात है कि किसी का परमार्थ बिगड़ रहा है और कोई दुनियाँ की ऐसी मुसीबत है जो उसकी तरक्की में बाधक है, उसके लिए दुआ कर देते हैं। वर्ना जब हर एक को हर वक्त यहीं रोना है, तो कहाँ तक किस-किस के लिए दुआ करें। जितना दुनियाँ में फंसोगे उतनी ही ख़्वाहिशें बढ़ेंगी, उतनी ज़्यादा दुःख तकलीफें भी आयेंगी। इसलिए दुनियाँ में इतना फँसे, जितने में कम से कम काम

चल सके, जितना कम से कम जरूरी हो। किसी काम को करने से पहले खूब सोच लो कि क्या यह काम वास्तव में जरूरी है, क्या इसके बिना काम नहीं चलेगा ? अगर जरूरी हो तो करें, वर्ना छोड़ दें।

भक्ति बढ़ाने का सबसे ऊँचा तरीका यह है कि मन के फंदे से बचें और ईश्वर से नाराज न हों। जरा गर्मी हो जाये तो कहने लगते हैं 'हाय बड़ी तपन है'। कभी बारिश ज़्यादा हो गयी तो परमात्मा को कोसने लगे। ये सब बुरी बातें हैं। परमात्मा के सब काम सर्वहित के लिए होते हैं। वह जो करता है, किसी अच्छाई के लिए ही करता है। उसके कामों को अपने मन की कसौटी पर न परखते रहो। जिस हाल में वह रखे उस हाल में खुश रहो। उफ भी न करो। कोई ख़्वाहिश न उठाओ। 'शुक्र' वही है कि अगर तकलीफ भी हो रही है तो भी उसकी सराहना करो। हर समय राज़ी–ब–रज़ा रहो। मान लो किसी का लड़का बीमार हुआ। अगर अच्छा हो गया तो खुश हैं और अगर मर गया तो लगे भगवान को कोसने, संध्या–पूजा बंद कर दी। यह नहीं सोचा कि जिसने दिया था उसने ले लिया। ये परमात्मा से मोहब्बत हुई या लड़के से ?

मनमानी करना बन्द करो। मन के बन्धनों को ढीले करते चलो। हर एक चीज को परमात्मा की समझो। मोह छूटता जायेगा। जिस हाल में वह रखे उसमें खुश रहो। गुरु के कहने पर चलो और परमात्मा की याद में रहो। ईश्वर तुम्हें प्रेम देगा।

मानव जीवन की सफलता

तुम्हारा जीवन किसी को दुःखी बनाने, किसी का सुख छीनने तथा किसी को असुविधा देने के लिए नहीं है। वैसा जीवन तो राक्षसों का होता है। तुम मानव हो, तुम्हारा जीवन सेवा के लिए अपना सब कुछ देकर सबको सुख पहुँचाने के लिए है। तभी तुम मानव हो, तभी तुम्हारे जीवन की महत्ता है और इस महत्ता को केवल भगवत्प्रीत्यर्थ स्वीकार करने में ही मानव जीवन की सफलता है।

परमसंत डा.श्रीकृष्ण लाल जी महाराज के अनमोल वचन

उपदेश

सब अवतार या पैगम्बर, चाहे वह किसी देश में हुए हों और चाहे किसी मज़हब से ताल्लुक रखते हों– चाहे वे राम हों या कृष्ण, मौहम्मद हों या ईसा या और कोई, हमारे लिए सब एक समान आदरणीय है, भले ही उन्होंने अलग–अलग रास्ते ईश्वर प्राप्ति के लिए बनायें हों, पर वे सब रास्ते उसी लक्ष्य पर पहुँचाते हैं जो सब 'एक' हैं।

❖❖❖❖❖

परमात्मा ज़रूर है लेकिन वह अक़्ल से नहीं जाना जाता। अगर अक़्ल से उसे समझ सकें तो वह परमात्मा नहीं। सिर्फ़ शुद्ध मन उसको अनुभव कर सकता है। लेकिन जैसा वह है उसको वैसा ही समझ लेना नामुमकिन है।

❖❖❖❖❖

रूह (आत्मा) परमात्मा का एक बहुत ही नाचीज़ (तुच्छ) हिस्सा है जिसकी मिसाल (उदाहरण) समुद्र और बूँद से दी जा सकती है। आत्मा ख़वास (विशेषता, गुणों) में उसी के जौहर (गुण) रखती है। जैसे सोने की हर चीज़ चाहे वह कितने ही कम सोने की बनी हो, सोने के गुण रखती है। आत्मा को समझ लेना ही परमात्मा का ज्ञान है।

❖❖❖❖❖

परमात्मा की शक्ल है भी और नहीं भी है। यद्यपि बिजली की उपमा देना बहुत ही भद्दी मिसाल है लेकिन दुनिया में कोई ऐसी चीज नहीं जिससे परमात्मा या आत्मा की मिसाल दी जा सके। बिजली की शक्ल है भी और नहीं भी है। जब यह किसी स्थूल चीज से मिलती है, शक्ल अख़्तियार कर लेती है। इसी तरह जब आत्मा का प्रभाव किसी स्थूल वस्तु पर पड़ता है वह रूप धारण कर लेती है।

❖❖❖❖❖

साधारण मनुष्य के अन्दर आत्मा नहीं जीवात्मा काम कर रही है। आत्मा और जीवात्मा में फ़र्क है।

❖❖❖❖❖

किसी को बिना माँगे अपनी सलाह मत दो। अगर कोई तुम्हारी सलाह माँगे तो जो वक्त और मौके के मुताबिक़ ठीक समझो उसे बता दो। ऊपर–ऊपर से सबसे ताल्लुक रखो मगर अन्दर से अपने को सबसे अलहदा रखो।

❖❖❖❖❖

दुःख तब होता है जब हम किसी काम के नतीजे (फल) पर निगाह (दृष्टि) रखते हैं। जैसा नतीजा हम चाहते हैं अगर वैसा नहीं होता तो हमें दुःख होता है। इसलिए जैसी परमात्मा की मौज हो उसी में राजी रहें और जितना बन सके भजन, सुमिरन, ध्यान तथा महापुरुषों की बानी का पाठ करें। सत्संग करें और दीन दुखियों की, बड़ों की तथा गुरुजनों की सेवा करें।

❖❖❖❖❖

साँस खाली जा रहा है, सुनहरा अवसर खो रहे हो। क्या इसका अफसोस नहीं है? मनुष्य जन्म और सन्त–मिलन बार–बार नहीं होता। इस वक्त को ग़नीमत जानो और लग लिपट कर अपना काम बना लो।

❖❖❖❖❖

किताबों को पढ़ने से कभी–कभी भ्रम हो जाता है, इसलिए जिस तरह की किताबें जिस अभ्यासी को बताई जावें उसी तरह की पढ़नी चाहिए। अलग–अलग सन्तों ने अलग–अलग तरीकों से परमात्मा को प्राप्त किया है और हर तरीके के कायदे और कानून भी अलग हैं। इसलिए शुरु में एक ही रास्ते को पकड़ना चाहिए। नदी को एक ही नाव में बैठकर पार करना चाहिए। एक बार पार हो जाने पर अलग–अलग रास्ते चल सकते हैं। उसमें कोई हर्ज़ नहीं है। मंजिल देखी हुई हो तो आदमी बहकता नहीं है।

❖❖❖❖❖

दुःख वहाँ होता है जहाँ हम अपने कर्त्तव्य को भूल जाते हैं। अगर हम अपना कर्त्तव्य समझ कर सब काम करें तो उसमें दुःख न हो, नाते रिश्तेदारों से मोह न हो।

❖❖❖❖❖

तुम्हारा काम सेवा है, इसे दृढ़ता से पकड़ लो। चाहे कोई विध्न आए, अपनी खुदी (अहं, महव) को तोड़ते हुए उस मार्ग पर चलते जाओ।

❖❖❖❖❖

हमारे देश में अगर कोई गृहस्थ धर्म का ठीक ठीक पालन करे तो शान्ति का रास्ता आसानी से खुल जाता है। अपने स्वार्थ को मार कर दूसरों का उपकार करना यही हमारे यहाँ का रास्ता है। जिस घर में सहयोगिता नहीं है वहाँ शान्ति नहीं है – मन ईश्वर की तरफ़ कैसे जायेगा ?

❖❖❖❖❖

अपने देह का गुरु और अपने गुरु की देह, अपने इख़लाक (सदाचार, आचरण) का गुरु, गुरु का इख़लाक, जीवात्मा का गुरु, गुरु की आत्मा है। जो जिस जगह और जिस स्थिति पर अपनी बैठक रखता है उसका गुरु भी उसी मुक़ाम का है।

❖❖❖❖❖

रहना तो इसी दुनिया में पड़ेगा। दुनिया नहीं छोड़ सकते। पहाड़ों पर जाने में, घर बार छोड़ने में दुनिया नहीं छूटती, दुनियाँ की कुछ चीजें भले ही छूट जायें। मन से दुनिया को छोड़ो। सब काम उसी तरह होते रहेंगे जैसे होते हैं, लेकिन सिर्फ़ भाव बदलना पड़ेगा। हर काम को परमात्मा का काम समझ कर उसकी सेवा करो और इस भाव को स्थायी बना लो। लगातार यही ख़्याल रहे कि जो काम तुम कर रहे हो वह ईश्वर की सेवा है।

प्रवचन परमसंत डॉ.करतार सिंहजी साहब

तीन प्रकार के चरण

संतों ने सत्गुरु के चरणों की महिमा खूब गायी है। सत्गुरु के चरण क्या हैं ? ईश्वर सर्वव्यापक है और उसकी कृपा की धार प्रतिक्षण, प्रत्येक समय सब प्राणियों पर एक जैसी बरस रही है। इस बारिश को सूफियों ने 'फैज' संतों ने 'अमृत' तथा ईसाईयों ने 'ग्रेस' (हतंबम) कहा है। अरविंदो जी ने इसी को 'भगवत प्रसादी' कहा है। इसी को 'प्रभु के चरण' कहा गया है। इन चरणों को पकड़ कर, इन चरणों की सेवा करके हम प्रभु तक पहुँच सकते हैं। यह फैज, यह अमृत क्या है ? जैसे सूर्य और सूर्य का प्रकाश है, उस प्रकाश को पकड़ कर हम सूर्य तक पहुँच सकते हैं, उस प्रकाश में वे ही गुण हैं जो सूर्य में हैं, उसी प्रकार से प्रभु के जो गुण हैं वे इस धार, इस अमृत में हैं। इस फैज को, इस भगवत प्रसादी को कैसे प्राप्त करें ? तुलसीदास जी ने रामायण के शुरु में ही श्रद्धा और विश्वास पर बल दिया है। श्रद्धा और विश्वास तभी आता है जब व्यक्ति को कुछ थोड़ी सी अनुभूति हो जाती है। केवल बातों पर से श्रद्धा और विश्वास पुख़्ता नहीं होते। सम्मान और आदर तो आयेगा परन्तु श्रद्धा और विश्वास बिना कुछ जाने हुए नहीं आते।

सत्गुरु के चरणों को कैसे पकड़ें ? मन को पहले निर्मल कर लें, वातावरण को भी कुछ योग्य (शुद्ध) बना लें। साधना में जिस वक्त बैठें, प्रभु के गुण गान करें, स्तुति करें और हृदय की झोली को फैला कर बैठ जायें, शरीर को ढीला छोड़ दें। बिलकुल ढीला, पूर्णतः रिलैक्स्ड (त्मसंगमक)। ईश्वर से प्रार्थना करें कि हे प्रभु! हमें अपना प्रेम प्रदान करें, हमें अपनी शरण में ले लें, हमें अपनी कृपा-प्रसादी प्रदान करें और मन ही मन उसका नाम लेते रहें। दो या तीन मिनट बाद आप अनुभव करेंगे, बरसों की प्रतीक्षा की आवश्यकता नहीं है, उसी वक़्त तुरन्त आपको इसकी अनुभूति हो सकती है। आप देखेंगें कि दो तीन मिनट बाद आपके शरीर में अन्दर और बाहर कुछ छू रहा है। यदि आप इसी प्रकार बैठे रहेंगे तो आप इस प्रसादी से,

इस अमृत से, इस फैज से भीग जायेंगे। आप जितना इस शरीर को ढीला छोड़ेंगे, समर्पण भाव से बैठेंगे और यदि आपका मन भी शान्त होगा तो आपको गुरु चरणों की अनुभूति तुरन्त ही हो सकती है। और यदि व्यक्ति यही अभ्यास करता रहे, (गुरु महाराज महात्मा श्रीकृष्ण लाल जी ने कहा था कि यदि व्यक्ति यही अभ्यास छः महिने लगातार चौबीसों घंटे करता रहे) तो उसको पूर्णतः लय अवस्था प्राप्त हो सकती है एवं वह भीतर और बाहर दोनों ही ईश्वरमय हो जायेगा। परन्तु हमारा मन यह करने नहीं देता। इसीलिये मन को शान्त करने के लिए पहला चरण है सदाचार का, सद्विचार और सद्व्यवहार का। जब तक सतगति नहीं आती तब तक मन स्थिर और एकाग्र नहीं होगा। जब तक शरीर में तनाव रहेगा तब तक इस अमृत प्रसादी, भगवत प्रसादी का पूर्ण अनुभव नहीं हो सकता। अपने आप को पूर्णतः समर्पण कर देना है।

व्यवहार में जिस स्थिति में भी रहते हैं सन्तुष्ट रहें। जो व्यक्ति इस सन्तोष का अभ्यास करता है वह व्यक्ति इस प्रसादी को तुरन्त ग्रहण कर लेता है। भीतर मन में व शरीर में किसी प्रकार का तनाव न हो। जैसे प्रगाढ़ निन्द्रा में व्यक्ति की अवस्था होती है, वैसी ही अवस्था जागृत अवस्था में भी होनी चाहिये। यह प्रसादी लेने का तरीका है इसे स्त्री–बच्चे, सब कर सकते हैं। दूसरी जो भी साधना करते हों उसके साथ इसको करके व्यक्ति लाभ उठा सकता है। कोई मूर्ति पूजा करता है, मन्दिर जाता है उसको भी ऐसा ही सोचना चाहिये कि भगवान सामने बैठे हैं। वैसे तो ईश्वर की ओर से कृपा आती है पर मन्दिर में स्थापित मूर्ति तथा गुरु के द्वारा भी यह कृपा ली जा सकती है। हम जब मन्दिर में जाते हैं तो मन्दिर में भी पहले आराधना करते हैं, प्रार्थना करते हैं, अपने इष्टदेव की मूर्ति के सम्मुख बैठ जाते हैं। उस समय यह ख़्याल करें कि उनकी कृपा प्रसादी उनके हृदय या मस्तिष्क में से निकलकर हमारे सारे शरीर में फैल रही है। जिस स्थान पर यह कृपा वृष्टि अधिक होगी, समझ लेना चाहिये कि वह स्थान अधिक पवित्र है। तो यह कृपा प्रसादी मूर्ति के माध्यम से, गुरु से, किसी पुस्तक में श्रद्धा है तो उसके माध्यम से भी प्राप्त की जा सकती है क्योंकि ईश्वर तो सर्वज्ञ है, सर्वव्यापक हैं। कृपा तो प्रभु की है, आप मूर्ति द्वारा, गुरु द्व

ारा या सीधे प्रभु से लीजिए। सूफी लोग, संत लोग बहुधा यही साधन करते हैं।

दूसरा चरण यह है कि महापुरुष जो आदेश–उपदेश दें उनको श्रद्धा से सुनें और उनके अनुसार अपने जीवन को बनाने का प्रयास करें। उनके आदेश–उपदेश ही उनके चरण हैं। उनकी, उनके चरणों की सेवा क्या है ? उनके आदेशों–उपदेशों का पालन करना। उनके आदेश या उपदेश क्या होते हैं ? अपने आप को बनाओ। अपने शरीर को स्वस्थ रखो, मन को स्वस्थ रखो यानी मन को विकारों से मुक्त रखो। उसको सद्‌गुणों का भोजन दीजिये। बुद्धि को स्वस्थ रखिये यानी इसके भीतर जो संशय हैं, जो भय की वृत्तियाँ हैं या और किसी प्रकार के अवगुण हैं, उनसे मुक्त होकर शुद्ध बुद्धि, स्थितिप्रज्ञ अवस्था आ जाए यानी किसी भी अवस्था या स्थिति में आप तुरन्त सही निर्णय ले सकें। बुद्धि में हँस गति आ जाए यानी वह यह समझ सके कि सार क्या है और असार क्या है, आत्मा, अनात्मिकता क्या है, ईश्वर क्या है और ईश्वर का अस्तित्व क्या है ? जो बात आपके हित में है उसे पकड़ लें और अहित में है उसे छोड़ दें। गुरुजन यही कहते हैं और कुछ नहीं कहते। महर्षि रमन ने तो यहाँ तक कहा है कि यदि आपको किसी से प्रेम करने में संकोच होता है तो अपने आप से प्रेम करें, अपनी सेवा करें। अपनी सेवा ही संसार की सेवा है। सभी कहते हैं कि किसी के साथ हिंसा नहीं करना चाहिये। यदि आप किसी पर क्रोध करते हैं तो इसका प्रभाव किस पर पड़ेगा ? क्रोध करने वाले पर। आपका मन चंचल हो जायेगा, चित्त दुःखी हो जायेगा, मन में अशान्ति आ जायेगी। आप किसी से घृणा करते हैं या झूठ बोलते है तो किसी दूसरे को हानि पहुँचने से पहले आपकी हानि होगी।

एक स्त्री सन्त ने लिखा है कि जो सत्यता की साधना करता है वह भला कैसे झूठ बोल सकता है। यदि वह झूठ बोलता है तो वह अपने प्रति बड़ा पाप करता है। इस पाप से इतनी मलीनता भीतर में हो जाती है कि उसको निर्मल करने में बरसों लग जाते हैं। तो पहले अपनी सेवा करो। इसके बाद और आगे बढ़ो। ईश्वर या आत्मा आपके भीतर में है। बाहर कहाँ ढूढ़ते हो। अपनी आत्मा की अनुभूति करें, आत्मा का दर्शन करें। यह

कोई आसान बात नहीं है। अपने आपको शुद्ध, निर्मल करते चले जाइए। धीरे–धीरे अनुभूति हो जायेगी। अपनी सेवा करते जाइए, अपने आपको ध ोते चले जाइए। ज्ञान से या भक्ति से, जैसी आपकी वृत्ति हो, अपनी सेवा करें। ये गुरु के चरण हैं।

तीसरा जो चरणों का अर्थ लिया जाता है, वह शारीरिक चरण हैं। जैसा व्यक्ति होता है वैसी ही तरंगें उसके भीतर से निकलती हैं। यदि हमारे भीतर में बुरे विचार उठते हैं तो हम अपनी बुरी तरंगों (अपइतंजपवदे) से वायुमण डल को दूषित करते रहते हैं। यह महान पाप है। सन्त के भीतर में प्रेम होता है, सत्यता होती है, आनन्द होता है, शान्ति होती है। उसके भीतर में से इन गुणों की रश्मियाँ अप्रयास ही निकलती रहती हैं। जो प्रयास से होता है उसमें नेकी भी हो सकती है बुराई भी। महापुरुष कभी भी मन से इन तरंगों को नहीं निकालते। वह स्वतः ही, अप्रयास ही आत्मिक रश्मियाँ प्रदान करते हैं। उनका शरीर इन तरंगों से, इन रश्मियों से पूरित होता है। उनका पूर्ण शरीर इन गुणों के कारण पवित्र होता है। कबीर साहब चरणों द्वारा दीक्षा दिया करते थे। पाँव का अँगूठा मस्तक पर छूते थे। कहने का मतलब यह है कि सन्तों के चरणों से आत्मिक शक्ति निकलती है, आत्मा की तरंगें निकलती हैं। यदि सन्त हमें आज्ञा दें और हम उनके चरण छुएं और उनकी सेवा करें तो हम उनके चरणों द्वारा वह प्राप्त कर सकते हैं जो कुछ उन सन्त के भीतर है। परन्तु सन्त किसी से सेवा लेते नहीं हैं। इसके दो कारण हैं। एक तो यह कि जो सेवा करने वाला है वह पवित्र आत्मा है भी या नहीं। यदि वह अपवित्र है तो वह भी अपना कुछ न कुछ प्रसाद दे जायेगा। दूसरा यह कि इससे अभिमान हो जाता है। बच्चों को इजाजत दे देते हैं परन्तु बड़ों से सेवा नहीं कराते।

ये तीन प्रकार के चरण हैं। इन गुणों की महिमा शास्त्रों में और सन्तों की वाणी में बताई गई है। इन तीन चरणों में से जो भी चरण जिन्हें मिल सकें, वे भाग्यशाली होंगे। प्रभु की कृपा और महापुरुषों का उपदेश और तीसरा उनकी आत्मिक प्रसादी। यह आत्मिक प्रसादी उनके पास बैठकर प्राप्त होती है। इसी को सत्संग कहते हैं यानी ऐसे व्यक्ति का संग करना जो पूर्णतया सत्यता का रूप बन गया है। उसी को सन्त कहते हैं और उसी

का संग सत्संग कहलाता है। दो चार भजन पढ़ लिए, कीर्तन कर लिया, यह सत्संग नहीं है। सत्य का संग, चाहे सन्त का हो या ईश्वर का, वही उत्तम है। ईश्वर का भी संग हो सकता है। ईश्वर के संग का मतलब है उनके समीप होना और उनके चरणों को पकड़ कर उन तक पहुँचना एवं उनके चरणों की रज बन जाना। मतलब यह है कि अहंकार से मुक्त होकर अपनी आत्मा को उनकी आत्मा में मिला देना। यही सत्संग है।

संयम से स्वास्थ्य

भगवान बुद्ध श्रावस्ती के निकट एक गांव में ठहरे हुए थे। अनेक व्यक्ति उनके सत्संग के लिए आते रहते थे। एक दिन एक धनी व्यक्ति उनके दर्शन के लिए पहुंचा। भारी–भरकम बेडौल शरीर के कारण उससे अच्छी तरह चला भी नहीं जा रहा था। वह झुककर उन्हें प्रणाम भी नहीं कर पाया। उसने खड़े–खड़े विनम्रता से कहा, 'भगवान, मेरा शरीर अनेक व्याधियों का अड्डा बन चुका है। रात को न नींद आ पाती है और न दिन में चैन से बैठ पाता हूँ। कृपा करके मुझे रोगमुक्ति का साधन बताने की अनुकंपा करें।'

भगवान बुद्ध ने कहा, 'प्रचुर भोजन करने से उत्पन्न आलस्य व निद्रा, भोग व अनंत इच्छाओं की कमाना, शारीरिक श्रम का अभाव ये सब रोग पनपने के कारण हैं। जीभ पर नियंत्रण रखने, संयमपूर्ण सादा सात्विक भोजन करने, शारीरिक श्रम करने, सत्कर्मों में रत रहने और अपनी इच्छाएं सीमित करने से ये स्वतः विदा होने लगते हैं। असीमित इच्छाएं और अपेक्षाएं शरीर को घुन की तरह जर्जर बना डालती हैं। इसलिए सबसे पहले उन्हें त्यागो।'

सेठ ने उनके वचनों का पालन करने का संकल्प लिया और लौट गया। एक महीने में ही वह स्वस्थ हो गया। उसने बुद्ध के पास जाकर कहा, 'शरीर का रोग तो आपकी कृपा से दूर हो गया। अब चित्त का प्रबोधन कैसे हो।' बुद्ध ने कहा, 'अच्छा सोचो, अच्छा करो और अच्छे लोगों का संग करो। विचारों का संयम चित्त को शांति और संतोष देगा।' सेठ बुद्ध के बताए मार्ग पर चलने लगा। जल्दी ही उसे लाभ नजर आने लगा।

प्राचीन मुस्लिम संतों के जीवन चरित्र

फजल अयाज

तपस्वी फजल अयाज एक महामान्य ऋषि थे। पहले वे लुटेरों के सरदार थे। किन्तु उनके जीवन का रुख आश्चर्यजनक रूप से बदल गया था। तत्व ज्ञान और विवेक–वैराग्य में वे सब तपस्वियों के शिरोमणी बन गये थे। उनके जीवन की पहली दशा ऐसी थी–

लुटेरे की हालत में फजल अयाज मर और बारुत के जंगल में तम्बू तानकर रहते थे। कफनी पहनकर और हाथ में तसबीह लेकर वे फकीरी वेश में रहते और काम करते डाकू का। इस काम में उनके सैकड़ों साथी और साझेदार थे। वे सब लूटपाट करते और लूट का माल फजल अयाज के सामने लाते। वे लूट का माल सब में बाँट देते और इच्छानुसार अपने लिये रख लेते। ऐसा नीच काम करके भी वे शुक्रवार को सबको नमाज में बुलाते और जो न आता उसे अपने दल से अलग का देते।

एक दिन व्यापारियों का एक काफिला उनके पास से जा रहा था। लुटेरों ने उन पर धावा बोल दिया। उस काफिले के सौदागर ने अपना माल वहीं किसी जगह छिपा देने का इरादा किया। इधर–उधर देखने पर उसे वह तम्बू दिखाई दिया और उस तम्बू में दिखाई दिये फकीर के वेश में फजल। उन्हें फकीर समझकर, अपने धन की रक्षा के लिए उसने उन्हें उचित पात्र समझा। सोच विचार कर उसने अपने धन की थैली उनके आगे सारी हकीकत सुनाकर रख दी। फजल ने थैली को तम्बू के एक कोने में रख देने का इशारा किया। थैली रखकर वह सौदागर लौट गया। उधर उसके सब साथियों को लूट्कर डाकू चल दिये थे। थोड़ी देर बाद वह सौदगर अपनी थैली वापस लेने के लिए तम्बू में गया, तो क्या देखता है कि वे सब डाकू उसी तम्बू में इकठ्ठे होकर लूट का माल बाँट रहे हैं। यह देखकर बेचारा सौदागर दंग रह गया। अपने धन को अपने आप डाकू की हिफाजत में रख

देने की मूर्खता पर हाथ मलमल कर पछताने लगा। धन के वापस पाने की सारी आशा छोड़कर वह चुपचाप उलटे पाँव तम्बू से लौटने लगा पर इतने में ही फजल ने उसे देखकर अपने पास बुलाया। डर के मारे सौदागर काँपने लगा। फजल ने पूछा ''क्यों आया है ?'' सौदागर ने जवाब दिया– ''अपनी धरोहर लौटा लेने के लिए पर मुझसे ग़लती हुई, अभी लौट जाता हूँ।'' फजल ने कहा– ''यों ही क्यों लौट जायेगा, जहाँ अपनी थैली रखी है, वहाँ से उठाकर लेता जा।''

अपनी थैली लेकर खुश होता हुआ वह सौदागर अपने साथियों के पास लौट आया। फजल के साथियों ने पूछा– ''आपने यह क्या किया ? हाथ में आया धन क्यों लौटा दिया ?''

फजल ने कहा– ''उस मनुष्य ने मुझे सच्चा मानकर, मुझे फकीर समझकर मुझ पर विश्वास किया था। ईश्वर के इस वेश के प्रति जो सद्भावना है उसकी रक्षा करना मेरा कर्तव्य था। खुदा करे मेरा साधु भाव कायम रहे।''

उस घटना के कई दिन बाद उन्हीं डाकूओं ने सौदागरों के एक दूसरे काफिले को लूटकर उसका धन हथिया लिया। सौदागरों में से एक ने पूछा– ''क्यों भाई तुम्हारा भी कोई सरदार तो होगा ?'' लुटेरों ने उत्तर दिया– ''हाँ है। नदी तट पर तम्बू में वो नमाज पढ़ रहे हैं।''

''यह तो नमाज का समय नहीं।''

''वे रिवाज से भी ज्यादा नमाज पढ़ते है।''

''वे खाते किस वक्त हैं ?''

''वे आजकल रोजा कर रहे हैं, इसलिए दिन में नहीं खाते।''

''रोजा तो रमजान महीने में रखे जाते हैं, यह तो रोजा रखने का महीना नहीं है।''

''वे नियम से भी अधिक रोजा रखते हैं।''

ये बातें सुनकर सौदागर को बहुत आश्चर्य हुआ। तुरन्त ही वह फजल के पास पहुँचा और बोला– ''आप नमाज और रोजा के साथ–साथ यह लूट का काम क्यों करते हैं ?''

फजल ने पूछा– ''तूने कुरान पढ़ा है ?''

'हाँ'

इसमें यह पढ़ा है या नहीं– ''दूसरे लोगों को भले काम करने वाला जानने के बाद बुरा काम करने वाला भी जानता हूँ।''

सौदागर यह सुनकर चुप हो गया। फिर एक बार रात के समय उस रास्ते से सौदागरों का काफिला जा रहा था। फजल ने अपने साथियों के साथ उन पर धावा किया। इतने में सौदागरों में से एक ने कुरान का यह वाक्य पढ़ा– ''तुम्हारा सोता हुआ मन जाग जाए, इतनी योग्यता भी क्या अभी तक तुम में नहीं आई।''

फजल के हृदय में कुरान के ये वचन तीर की तरह जाकर लगे, मानो उन्होंने फजल पर आक्रमण करके उसे सचेत करते हुए कहा हो– ''अरे मूढ़! अब भी क्या लूटपाट करता रहेगा ? क्या, अब भी तेरे जीवन के रुख को बदलने का मौका नहीं आया ?''

फजल आर्तनाद करके बोल उठे– ''हाँ, समय आ गया है। वचनबाण ने ठीक जगह चोट पहुँचाई है।'' फजल अत्यन्त व्याकुल और शर्मिन्दा होकर सूनसान जंगल की ओर दौड़ पड़े। उन्हें आगे व्यापारियों की एक दूसरी टोली मिली। वे आपस में बात कर रहे थे कि यहाँ फजल नाम का एक मशहूर डाकू रहता है, उससे बचकर चलना चाहिए। उनकी बात सुनकर फजल ने कहा– ''भाईयों! मैं आप लोगों को एक खुशखबर सुनाना चाहता हूँ। फजल ने अब लूट का काम छोड़कर पछतावा करना शुरु कर दिया है। खुदा की मेहरबानी से अब उसके जीवन की गति बदल गई है। आज वह तुम लोगों के आगे से भागा जा रहा है।'' इतना कहते–कहते वे वहाँ से रोते हुए चल दिये। आगे जाने पर उन्हें एक आदमी मिला, उससे उन्होंने कहा– ''तुझे खुदा की कसम, मुझे बादशाह के पास ले चल। मुझ पर वह बेहद नाराज है। मुझे पाकर वह बेहद खुश होगा। मुझे अब उसकी सजा की जरूरत है।''

ऐसा आग्रह देखकर वह व्यक्ति फजल को वहाँ के बादशाह के पास ले गया। बादशाह ने बातचीत से जान लिया कि अब फजल के जीवन का

रुख बदल गया है और वह अपना भावी जीवन पवित्र करने के लिए सजा चाहता है। बादशाह ने बहुत आदर के साथ उन्हें उनके घर लौटा दिया। आँगन में आकर फजल ने अपने बेटे को पुकारा। उनकी आवाज सुनकर सबको आश्चर्य हुआ और वे बात करने लगे कि उनकी आवाज ऐसी कैसे हो गई है ? ज़रूर उन्हें कोई भारी चोट लगी है।

फजल बोले– ''हाँ, मुझे भारी चोट लगी है''।

बेटे ने पूछा– ''कहाँ'' ?

फजल– ''कलेजे में''।

फजल ने घर में जाते ही अपनी स्त्री से कहा– ''कल ही मेरा विचार मक्का जाने का है, बोल तेरी क्या मंशा है।''

स्त्री बोली– ''मैं आपसे विछोह करना नहीं चाहती। जहाँ आप वहीं मैं। साथ रहकर मैं आपकी चाकरी करूँगी।''

फजल स्त्री के साथ मक्का गये। ईश्वर ने सहज उन्हें मार्ग दिखा दिया। मक्का में रहने से वे कई साधु–संतों के समागम में गये। धर्माचार्य अबु हनीफा के साथ बहुत समय तक रहकर उन्होंने ज्ञान प्राप्ति तक साधना की। उसके बाद वे उपदेशक का काम भी करने लगे। मक्कावासी सैकड़ों लोग उनका उपदेश सुनने आते थे। बहुत दिनों बाद उनके पहले के मित्र–बारुत जंगल के लुटेरे, उनसे मिलने आये। पर फजल ने उन्हें अपने पास नहीं आने दिया। घर की छत पर खड़े होकर उन्होंने सिर्फ इतना कहा– ''ऐ धर्म विमुख दोस्तों! प्रभु तुम्हें भी सद्‌बुद्धि दे और अपने कार्य में लगावे।'' यह सुनकर उनके पुराने दोस्त निराश हो गये। अब फजल का साथ नहीं हो सकेगा, ऐसा समझकर वे ख़ुरासान की ओर चले गये। छत पर खड़े होकर फजल उनके लिए बहुत देर तक रोते रहे।

खलीफा हारुन–उल–रसीद ने एक दिन अपने एक दोस्त से कहा– ''आज मुझे तू एक ऐसे आदमी के पास ले चल, जो मेरे दिल को शांत कर सके। यहाँ तो मैं दुनियाँ के कोलाहल से व्याकुल सा हो रहा हूँ।''

मित्र ने खलीफा को तपस्वी सुफियान के द्वार पर लाकर खड़ा कर दिया। दरवाजा खटखटाने पर सुफियान ने पूछा– ''कौन है'' ?

मित्र– ''देशाधिपति हारुन–उल–रशीद।''

सुफियान– ''मेरे अहोभाग्य! आज वे मेरे यहाँ पधारे। मुझे खबर दे देते तो मैं खुद वहाँ चला आता।''

यह उत्तर सुनकर खलीफा ने कहा– ''मित्र, मैं जिससे मिलना चाहता हूँ, वह यह नहीं है।''

यह सुनकर सुफियान ने कहा– ''मैं समझा आप जिससे मिलना चाहते हैं वह तो फजल है।''

वे दोनों फजल अयाज के घर गये। उस समय फजल कुरान के ये वचन बोल रहे थे– ''दुराचारी लोग भी यह समझते हैं कि मैं उन्हें धार्मिक लोगों में गिन लूँगा।''

हारुन इसे सुनकर बोले– ''उपदेश के लिए मुझे एक यही वचन काफी है।''

उन्होंने दरवाजा खटखटाया।

फजल– ''कौन है ?''

हारुन का मित्र– ''खलीफा हारुन रशीद''

फजल– ''उन्हें मुझसे क्या काम है ? और मुझे भी उनसे क्या काम है ? मुझे अपने कामों से दूसरी ओर न खींचने की मेहरबानी करो।''

हारुन का साथी– ''मुल्क के मालिक की आपको इज़्ज़त करनी चाहिए।''

फजल– ''मुझे खलल न पहुँचाओ।''

उन्होंने अजीजी से झोपड़ी में आने देने के लिए विनती की। फजल ने उन्हें भीतर तो आने दिया पर हारुन–उल–रशीद का मुँह न देखना पड़े इसलिए रोशनी गुल कर दी। अँधेरे में हारुन ने फजल से हाथ मिलाया। छूते ही फजल ने कहा– ''अहा! ऐसा कोमल हाथ, इन हाथों को नरक की अग्नि में जलना होगा।''

इतना कहकर वे नमाज पढ़ने के लिए उठ खड़े हुए।

हारुन रोने लगे, उन्होंने कहा– ''कुछ तो कहिये।''

नमाज पूरी करके हारुन बोले– ''तुम्हारे पिता पैगम्बर मुहम्मद साहब के चाचा थे। उन्होंने खलीफा की पदवी पाने की मंशा जाहिर की। तब पैगम्बर साहब ने कहा था, खलीफा बनकर हजार वर्ष तक लोक सेवा करने की अपेक्षा अपना मन ईश्वर से जोड़ना कहीं अच्छा है। मुल्क की मालिकी न देकर मैं आपको अपने मन की मालिकी देता हूँ।''

इतना कहकर वे चुप हो गये तो हारुन ने उनसे फिर कुछ कहने की विनती की। वे बोले– ''उमर अब्दुल अजीज जब खलीफा की गद्दी पर बैठा, उसी समय उसने अब्दुल के बेटे सालम को, इयूत के बेटे रेजा को और काबेर के बेटे को (मुहम्मद) को अपने पास बुलाकर कहा था– ''मैं आज खलीफा के पद पर बैठा हूँ, मेरा क्या कर्त्तव्य है, मुझे बताओ।

उनमें से एक ने कहा– ''यदि तुम्हें परलोक की सजा से बचना है तो वृद्ध पुरुषों को पिता की तरह, युवकों को भाइयों की तरह बालकों को अपनी संतान की तरह और स्त्रियों को माँ बहन की तरह देखो। मुसलमानों के ये सारे मुल्क तेरे बड़े घर के समान हैं और यह प्रजामण्डल तेरा विशाल परिवार है। बड़ों के आगे नम्र बनो, भातृमण्डल के साथ दयापूर्ण आचरण करो और बालकों के कल्याण के लिए उपाय करो। मुझे तो यही चिंता है कि तुम्हारा यह सुन्दर मुख नरक की अग्नि से कहीं कुरूप न हो जाये।''

यह सुनकर हारुन रोने लगा। फजल ने फिर कहा– ''ईश्वर से डरो। सावधान रहो। कयामत के दिन प्रभु सबसे उनके पाप–पुण्य का हिसाब पूछेगा और न्याय करेगा। आज तुम्हारे राज्य में यदि एक बुढ़िया भी अन्न बिना दुःख पाती होगी और भूख के मारे रात को खाली पेट सो जाती होगी तो वह ईश्वर के दरबार में तुम्हारे खिलाफ फरियाद करेगी।''

यह सुनकर तो हारुन फूट–फूटकर रोने लगे। तब उनके साथी ने फजल से कहा– ''फजल! आपने खलीफा को तो मार ही डाला।''

फजल– ''भाई, तू तो चुप ही रह। खलीफा को मैंने नहीं पर तूने और तेरे साथियों ने मारा है।''

हारुन के मन पर इस बात ने असर किया और वे और भी ज्यादा रोने लगे। कुछ देर बाद उसने फजल से पूछा– ''आपको किसी का कुछ देना है।''

फजल– ''हाँ, मैं प्रभु का बड़ा कर्जदार हूँ। यदि मैं उसका कर्ज न चुका सकूँगा तो बड़ी शर्म की बात होगी।''

हारुन– ''यह तो ठीक है पर क्या इस दुनिया में भी आपको किसी का कुछ देना है ?''

फजल– ''उस खुदा की मेहरबानी है, उसने मुझे इतनी दौलत बख्शी है कि कर्ज के बारे में कुछ भी कहने की जरूरत नहीं।''

इस पर भी हारुन ने एक हजार अशर्फियों की थैली उनके सामने रखकर कहा– ''यह रकम मैंने गैरवाजिबी तरीके से नहीं पाई है। यह मेरी अपनी दौलत में से है। मेहरबानी करके इसे मंजूर करें।''

फजल नाराज होकर बाले– ''मेरे उपदेशों का तुम पर कोई भी असर नहीं हुआ। मैं देखता हूँ कि अब भी तुम अविचार और भूल में पड़े हुए हो। मैं तुम्हारा बोझ हल्का करना चाहता हूँ। तुम्हें उन्नति और मुक्ति के रास्ते पर ले जाना चाहता हूँ, पर तुम तो उलटे मुझ पर ही बोझा डाल कर मुझे नरक की ओर घसीट कर ले जाना चाहते हो। मैं कहता हूँ कि जो कुछ तुम्हारे पास है उसे ईश्वर को सौंप दो, पर तुम तो देने चले उसे जिसे देने की जरूरत नहीं। अफसोस, मेरे कहने का तुम्हें कुछ भी फायदा नहीं हुआ।''

इतना कहकर फजल अपना दरवाजा बंद करने के इरादे से उठ खड़े हुए। यह देखकर खलीफा बाहर आ गया। फजल ने दरवाजा बन्द कर लिया। बाहर जाकर हारुन–उल–रशीद बोला– ''हाँ, सचमुच यही उन्नतात्मा महापुरुष हैं।''

एक बार फजल अपने बेटे को गोद में बैठाकर उसे प्यार से चूम रहे थे। बालक ने पूछा– ''पिताजी! आप मुझे चाहते हैं ?''

''हाँ चाहता हूँ।''

''आप प्रभु को भी चाहते हैं ?''

''हाँ''

''पिताजी! मनुष्य के दिल तो एक ही होता है, फिर उस एक दिल में दोनों कैसे समा सकते हैं ?''

फजल समझ गये कि यह छोटे बालक की बोली नहीं है, ईश्वर की प्रेरणा है। तुरन्त ही उन्होंने बालक को गोद से दूर कर दिया और खुद प्रभु के ध्यान में मग्न हो गये।

सुफियान ने एक रात फजल के साथ शास्त्र–चर्चा में बिताई। रात बीतने पर सबेरे जाते समय उसने कहा– ''आज की रात को मैं बहुत ही आनन्द की रात मानता हूँ। कितना सुखदायी सत्संग हुआ।''

इस पर फजल बोले– ''ना, ना आज की रात तो बहुत ही खराब बीती।''

''वह कैसे'' ? सुफियान ने पूछा।

''इसलिए कि तुमने सारी रात वाणी विलास द्वारा मुझे खुश करने में और मैंने तुम्हारे सवालों का बढ़िया जवाब देने की कोशिश करने में बिता दी। ऐसी कोशिश में हम दोनों प्रभु को तो भूल ही गये थे। एक दूसरे को खुश रखने के लिए ऐसा सत्संग करने की अपेक्षा निर्जन स्थान में ईश्वर के साथ बातें करने में अधिक कल्याण है।''

एक बार एक आदमी ने फजल के पास आकर कहा– ''मैं आपका स्नेह पाकर सुखी होने आया हूँ, आशा है मेरी इच्छा पूरी होगी।''

फजल– ''इसमें तो बहुत संदेह है भाई! तू मीठे–मीठे असत्य वचन कहकर मुझे फुसलायेगा और मैं तुझे। इससे क्या फायदा होगा।''

नया धार्मिक जीवन पाकर फजल निर्जन प्रदेशों में रहना ही पसन्द करने लगे। तीस वर्ष तक किसी ने उन्हें हँसते नहीं देखा, किन्तु जिस दिन उनके पुत्र का मरण हुआ उस दिन वे हँसते दिखाई दिये। उस हँसी का कारण पूछने पर उन्होंने बताया– ''आज मैं जान पाया हूँ कि प्रभु उसकी

मृत्यु से खुश हैं, मैं भी उसकी खुशी के साथ अपनी खुशी जाहिर करने के लिए हँस रहा हूँ''।

फजल कहा करते थे– ''हे प्रभु! तूने मुझे भूखा रखा है, मेरे परिवार को अन्न–वस्त्र से वंचित रखा है, रात के वास्ते दीपक भी नहीं दिया, पर मुझे विश्वास है कि ऐसा व्यवहार तू अपने बहुत ही प्यारे के साथ करता है। हे प्रभु! बता ऐसी अमूल्य सम्पत्ति का मालिक तूने मुझे क्यूँ बनाया ?''

फजल को हुए बारह सौ वर्ष हो गये। संतान में से उनकी दो बेटियाँ बची थीं। मरते समय उन्होंने अपनी पत्नी से कहा था– ''मुझे दफनाकर तू अपनी इन दोनों बेटियों को लेकर वर्तांकिस पहाड़ पर चढ़कर प्रभु की ओर दृष्टि उठाकर यह कहना– ''प्रभु! फजल के कहने के मुताबिक मैं आपकी होकर निवेदन करती हूँ। जब तक वे जीवित थे तब तक उन्होंने अपने आश्रितों का भरण पोषण किया। अब आपने उन्हें कैदखाने में डाल दिया है, इसलिए उनकी आश्रित इन दो लड़कियों को मैं आपके हाथों में सौपती हूँ।''

फजल के परलोक वासी होने के बाद उनकी पत्नी ने ऐसा ही किया। वर्तकिस पहाड़ पर जाकर बहुत रोने के बाद उसने प्रार्थना की। देवयोग से उसी समय उस मुल्क का राजा वहाँ आ पहुँचा। उसने उसका रोना सुनकर सारा हाल मालुम किया। फजल की स्त्री से सारी हकीकत सुनकर राजा ने कहा– ''तुम्हारी इन दोनों बेटियों की शादी मैं अपने दोनों राजकुमारों के साथ करना चाहता हूँ। बोलो, तुम्हारी क्या मर्जी है ?''

फजल की स्त्री ने उसमें कोई आपत्ति नहीं की। राजा पालकी मँगवाकर उन्हें लिवा ले गया। बड़ी धूमधाम से राजपुत्रों के साथ उन दोनों की शादियाँ हुई और दोनों को दस–दस हजार स्वर्ण मुद्राएँ स्त्री धन में दी गईं।

उपदेश वचन

1. यदि कोई आकर मुझे सलाम नहीं करता और यदि मैं रोगग्रस्त हूँ तो भी मेरी सेवा नहीं करता तो मैं बड़ा प्रसन्न होता हूँ, क्योंकि इससे मेरे जीवन में विशेष लाभ पहुँचता है।

2. रात को एकांत मिलेगा यह सोचकर मुझे प्रसन्नता होती और दिन होने पर लोगों का होहल्ला मच जायेगा यह जानकर मुझे दुःख होता है। लोग आ आकर मुझे बातों में लगाते हैं, यह मैं बिल्कुल नहीं चाहता।
3. जो मनुष्य निर्जनता से डरता है और लोगों से खुश होता है वो अपनी शान्ति खोता है।
4. स्वर्ग में किसी को रोते देखना जिस प्रकार आश्चर्यजनक है उसी प्रकार इस दुनियाँ में किसी को हँसते देखना।
5. जिसके मन में प्रभु का डर समाया है जिसकी जीभ नहीं चलती, उसके मन की प्रभु–भय की आग संसार की आसक्ति और विषय–वासना को जलाकर खाक कर डालती है।
6. जो मनुष्य ईश्वर से डरता है, उससे दुनियाँ भी डरती है और जो प्रभु से नहीं डरता, उससे दुनियाँ भी नहीं डरती।
7. साधक में जितना ईश्वर सम्बन्धी ज्ञान होता है, उतना ही वह ईश्वर से डरकर चलने में आनन्द मानता है। साधक परलोक से जितना स्नेह करता है इस संसार से उतना ही वैराग्य।
8. दुनियाँ में घुसना बहुत आसान है, पर उसमें से निकलना उतना ही मुश्किल है।
9. यदि परलोक मिट्टी का और अनित्य होता तथा यह लोक सोने का होता तो भी विचार करके देखते पर वह मिट्टी का परलोक ही भला दिखाई देता। किन्तु परलोक तो है सोने का और यह लोक है मिट्टी का, इसलिए इस लोक पर प्रीति होने का तो कोई कारण नहीं दिखाई देता।
10. इस दुनियाँ से कोई फायदा उठाने पर परलोक में उससे सौ गुना ज्यादा नुकसान उठाना पड़ेगा।
11. यहाँ से सुन्दर कोमल और कीमती कपड़ों और स्वादिष्ट भोजनों में आसक्त रहने वाले को स्वर्गीय अन्न–वस्त्र से वंचित रह जाना पड़ेगा।

12. ईश्वर के प्रति नम्र होना, उसकी आज्ञा के मुताबिक चलना, उसकी प्रत्येक इच्छा के आगे सिर झुकाना, इसी का नाम ईश्वर के प्रति विनय दिखाना है।
13. जो मनुष्य अपने आपको ज्ञानी समझता है वह विनय रहित है।
14. जो व्यक्ति दूसरों को ऊपर से प्रेम करता है किन्तु भीतर से उससे द्वेष रखता है, वह ईश्वर का कोप–भाजन बनता है।
15. ईश्वर जैसा है जो उसी रूप में जाकर उसका साक्षात्कार कर सकता है, वही मनुष्य उसकी सच्ची पूजा कर सकता है।
16. जो ईश्वर के सिवा न किसी की आशा रखता है और न किसी का भय, वास्तव में वही ईश्वर पर निर्भर रहने वाला है।
17. प्रभु पर निर्भर और उसके अधीन रहने वाला वास्तव में वही है, जिसने ईश्वर का दृढ़ निश्चय (आश्रय) पा लिया है और किसी भी बात का उसे दोष नहीं देता।
18. शुद्ध स्थान में जाकर कुछ पवित्र होते हैं तो अधिकांश शुद्ध होने के बदले और भी अधिक अपवित्र बन जाते हैं। तीर्थ भूमि मक्का में जाकर भी कई लोग अशुद्ध ही होकर लौटते हैं।

घृणा

''उसने मुझे गाली दी, उसने मुझे पीटा, उसने मुझे अपमानित किया''। ऐसे विचार जिसके मन में फँसे रहते हैं वह कभी घृणा को नहीं त्याग सकेगा। जिनके हृदय ऐसे विचारों से उन्मुक्त हैं, घृणा उन पर आधिपत्य जमाने में असफल रहती है। घृणा कभी घृणा से दूर नहीं होती। इस बीमारी को सदा प्रेम से ही दूर किया जा सकता है।

– भगवान गौतम बुद्ध

रामाश्रम सत्संग (रजि.) गाज़ियाबाद

रजिस्टर्ड ऑफिसः 9–रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड, ग़ाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

डा. शक्ति कुमार सक्सेना
सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष

अरविन्द मोहन
मंत्री

घोषणाः संस्था की कार्यकारिणी समिति–(2017–2018)

मैं, शक्ति कुमार सक्सेना, पुत्र स्व. श्री कृष्ण सहाय सक्सेना, सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष, रामाश्रम सत्संग (रजि.) ग़ाज़ियाबाद (उ.प्र.) संस्था की वर्तमान कार्यकारिणी भंग करता हूँ। वर्ष 2017–2018 के लिए संस्था के विधान की धारा 10(ग) में प्रदत्त अधिकारों के तहत नवीन कार्यकारिणी समिति,पदाधिकारी एवं सदस्यों की निम्नवत् घोषणा करता हूँ, जो विधान की धारा 9(ग) के अनुरूप एक वर्ष हेतु वैध रहेगी :–

क्र.	पद	नाम	पता	व्यवसाय
1.	अध्यक्ष	डा. शक्ति कुमार सक्सेना	एस–ए–36 शास्त्रीनगर, ग़ाज़ियाबाद	डाक्टर
2.	मंत्री	श्री अरविन्द मोहन	2बी, नीलगिरी–3, सेक्टर – 34, नौएडा	सर्विस
3.	कोषाध्यक्ष	श्री अनुराग चन्द्र प्रसाद	बी1–206, अरावली अपार्टमेंट, सेक्टर – 34, नौएडा	निजी व्यवसाय
4.	सदस्य	श्री भजन शंकर	कोठी नं. 84/14, दिल्ली रोड, गुड़गाँव	सेवानिवृत्त
5.	सदस्य	कैप्टन के.सी. खन्ना	आर –11/182, राजनगर, न्यू ग़ाजियाबाद	सेवानिवृत्त

जारी

क्र.	पद	नाम	पता	व्यवसाय
6.	सदस्य	श्री उमाकांत प्रसाद	207, संयम प्रतीक अपार्टमेन्ट, खाजपुरा, पटना	सेवानिवृत्त
7.	सदस्य	डा. दिनेश कुमार श्रीवास्तव	छावनी मौ. वार्ड नं.–4 पो. आ.– भभुआ, कैमूर	सेवानिवृत्त
8.	सदस्य	डा. मुद्रिका प्रसाद	साकेतपुरी मुजफ़्फरपुर बिहार	सेवानिवृत्त
9.	सदस्य	श्री रमेश चन्द्र जौहरी	सिन्धे का बाड़ा जनकगंज, ग्वालियर	सेवानिवृत्त
10.	सदस्य	श्री. आर. पी शिरोमणी	मूलचन्द मार्किट शमशाबाद रोड, आगरा	सेवानिवृत्त
11.	सदस्य	श्री प्रियासरन	105 – हिमालय टॉवर अहिंसा खण्ड–2, इन्द्रापुरम,	सेवानिवृत्त
12.	सदस्य	श्री अनिल कुमार	6, चेतना समिति ए. जी. कालोनी, पटना	सर्विस
13.	सदस्य	श्री विष्णु शर्मा	आर –27, नारायणा विहार गोपालपुरा, जयपुर	सर्विस
14.	सदस्य	प्रो. आर. के. सक्सेना	33–देशबन्धु सोसाईटी आई. पी. एक्सटेंशन नई दिल्ली	सर्विस

(ह0)
डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना
अध्यक्ष एवं आचार्य
रामाश्रम सत्संग (रजिस्टर्ड) ग़ाजियाबाद

दिनांक 29–09–2017

प्रतिलिपि– मंत्री, रामाश्रम सत्संग रजि. को निर्देशित करते हुए कि इस सूची को राम सन्देश के आगामी अंक में प्रकाशित करने की व्यवस्था करें।

रामाश्रम सत्संग (रजि.) गाज़ियाबाद

रजिस्टर्ड ऑफिसः 9–रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी.रोड, ग़ाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

डा. शक्ति कुमार सक्सेना 36, शास्त्री नगर

सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष ग़ाज़ियाबाद

घोषणा

मैं डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना पुत्र स्व. श्री कृष्ण सहाय सक्सेना, सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष रामाश्रम सत्संग (रजि.) गाज़ियाबाद, एतद् द्वारा शिक्षक वर्ग, रामाश्रम सत्संग (रजि.) ग़ाज़ियाबाद की परिवर्द्धित सूची सर्वसाधारण हेतु निम्न प्रकार से जारी करता हूँ ।

पूज्य गुरुदेव द्वारा जो इज़ाज़तें जारी की जा चुकी हैं वह पूर्ववत् रहेंगी। नए भाईयों, जिनकी नियुक्ति की गई है, उनके नाम व गुरुदेव द्वारा पूर्व में घोषित नाम नीचे प्रकाशित किये जा रहें हैं।:–

इज़ाज़त बैत शर्तिया (आचार्य पदवी प्रतिबंधित) क्र. 3ए :–

1. श्री भजन शंकर, गुड़गाँवा

इज़ाज़त बैत शर्तिया (आचार्य पदवी प्रतिबंधित) क्र. 3 :–

1. श्री रामसागर लाल, गोरखपुर
2. श्री उमाकान्त प्रसाद, पटना
3. श्री दिनेश कुमार श्रीवास्तव, भभुआ
4. श्री कृष्ण चन्द्र खन्ना, ग़ाज़ियाबाद

उपरोक्त में से किसी को भी इज़ाज़त देने का अधिकार नहीं होगा।

इज़ाज़त तालीम (शिक्षक) क्र. 2:–

1. डॉ. मुद्रिका प्रसाद, मुज़फ्फरपुर
2. श्री गिरिजानन्द लाल, बक्सर
3. श्री रमेश चन्द्र जौहरी, ग्वालियर
4. श्री आर. पी. शिरोमणी, आगरा
5. श्री अशोक प्रधान, नई दिल्ली
6. श्री विष्णु शर्मा, जयपुर
7. श्री भुवनेश्वर नाथ वर्मा, भभुआ
8. श्री महेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ, रेवाड़ी
9. डॉ. राजेश चन्द्र वर्मा, आरा
10. श्री पारसमणी ठाकुर, देवघर
11. श्री मोहन सहाय श्रीवास्तव,वाराणसी
12. डॉ. सुधीर कुमार, मोतीहारी
13. प्रो. आदर्श किशोर सक्सेना,ग्वालियर
14. श्री आदर्श कुमार, वाराणसी
15. श्री रामवृक्ष सिंह, चकिया
16. श्री छैल बिहारी श्रीवास्तव, कानपुर

17. श्री नारायण द्विवेदी, इन्दरगढ़ 18. श्री ओ पी एम तिवारी, बेंगलूरू
19. श्री जयशंकर नाथ त्रिपाठी, कुशीनगर

उपरोक्त में से किसी को भी बैत करने का अधिकार नहीं होगा।

इज़ाज़त मॉनीटर (सत्संग कराने की) कं. 1:–

1. श्री हरि शंकर तिवारी, सासाराम 2. श्री जे. सी. पी. सिन्हा, जमशेदपुर
3. श्री कन्हैया पाल, हाजीपुर 4. श्री जगजीवन पंडित, बरगनिया
5. श्रीमती आभा सिंह, बोकारो 6. श्री विनीत मिश्रा, अलवर
7. श्री बी सी महरोत्रा, राँची 8. श्री अवध बिहारी सिन्हा, सासाराम
9. श्री अरविन्द कुमार, वाराणसी 10. श्री प्यारे मोहन, बक्सर
11. श्री महेश प्रसाद वर्मा, सीतामढ़ी 12. श्री रमेश प्रसाद सिन्हा, मुजफ्फरपुर
13. श्री कामेश्वर प्रसाद चौधरी, दरभंगा 14. श्री राजेश कुमार सिंह, मुंगेर
15. श्री बिनोद कुमार, गोपालगंज 16. श्री भीम प्रसाद बरनवाल, झाझा
17. श्री एस. पी. श्रीवास्तव, मुगलसराय 18. श्री राजेन्द्र सिन्हा, लखनऊ
19. श्री रमेश चन्द्रा, लखनऊ 20. श्री हरपाल सिंह, एटा
21. श्री जटाशंकर लाल, गया 22. श्री राकेश कुमार श्रीवास्तव, चंडीगढ़
23. श्री सतीश कुमार, समस्तीपुर 24. श्री केदार राय, मधुबनी
25. श्री सुनील कुमार, पटना 26. श्री हरीश रोहिल्ला. झुंझुंनू
27. श्री आशुतोष घोष, भागलपुर

उपरोक्त सज्जनों को इज़ाज़त दी जाती है कि वे केवल भाइयों को एकत्र करके सत्संग करा सकेंगे। उन्हें या नये भाइयों को तालीम (शिक्षा) देने या बैत (दीक्षा) देने की इजाज़त नहीं है।

उपरोक्त घोषित इजाज़तें आगामी घोषणा होने तक जारी रहेंगी और यदि इनके अतिरिक्त किसी के पास कोई और किसी भी प्रकार की इजाज़त है तो वह स्वतः ही प्रभावहीन हो जाती है।

(ह0)
डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना
अध्यक्ष एवं आचार्य
दिनांक 29–09–2017 रामाश्रम सत्संग (रजिस्टर्ड) ग़ाजियाबाद

प्रतिलिपि – मंत्री, रामाश्रम सत्संग रजि. को निर्देशित करते हुए कि इस सूची को राम सन्देश के आगामी अंक में प्रकाशित करने की व्यवस्था करें।

ईश्वर प्राप्ति के उपाय

भक्तगण अक्सर हमसे पूछते हैं, जप–ध्यान में मन नहीं लगता, क्या करें ? यह प्रश्न हम में से अनेक लोगों के मन में उठता है। इसके उत्तर में हम कहते हैं, मन एक ऐसा यन्त्र है कि इसका जिस रूप में व्यवहार करें यह उसी रूप में कार्य करता है। चौबीस घंटों में हम लोग कितनी देर जप–ध्यान करते हैं, और कितनी देर दूसरे कामों में व्यय करते हैं, इसे सोचना होगा। मन सर्वदा जिस विषय का चिन्तन करता है, जप–ध्यान में बैठने पर उसी विषय का प्रस्फुटन होगा, यह स्वाभाविक है। इसी से जप–ध्यान में बैठने पर भगवान की बात मन में नहीं आती, मन स्थिर नहीं होता।

किन्तु इसका प्रतिकार क्या है ? प्रतिकार का सीधा उपाय यह है कि मन को कुछ और अधिक समय तक ईश्वर के चिन्तन में नियोजित रखने की चेष्टा करना। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, मन ऐसा है जैसे धोबी के घर का कपड़ा। उसे जिस रंग में डुबो रखोगे वह उसी रंग में रंगा जायेगा। मन को अधिक काल तक संसारिक चिन्तन में लगाए रखो तो ध्यान–जप के समय वही चिन्तन चलेगा। इसलिए जितना अधिक सम्भव हो ईश्वर चिन्तन का अभ्यास करना चाहिए। श्रीरामकृष्ण कहा करते थे कि हरदम मन को थोड़ा ईश्वर की ओर लगाए रखना होगा। जिससे मन में स्थायी रूप से भगवान का चिन्तन चलता रहे, इसका प्रयास करना होगा। हम लोगों के मन में यह प्रश्न उठेगा कि ऐसा होने पर सांसारिक कामकाज कैसे चलेंगे ? श्रीरामकृष्ण ने कहा है, ''यदि चौदह आना मन भगवान में लगाए रखकर दो आना मन से संसार के काम करो तो पार लग जाएगा।'' लेकिन हमलोग ठीक इसके विपरीत ही करते हैं। चौदह आना या पन्द्रह आना मन संसार में लगाए रखते हैं और दो–एक आना मन से ईश्वर का चिन्तन करना चाहते हैं। कोई भी मूल्यवान वस्तु आसानी से नहीं पायी जाती और पृथ्वी की सबसे मूल्यवान वस्तु को क्या इतनी सहजता से पाया जा सकता है ? इसलिए प्रभु का चिन्तन करने के लिए मन को उनकी ओर, सदैव सम्भव न हो तो सबसे अधिक समय लगाए रखना होगा। इससे संसार के कार्यों में बाधा

उत्पन्न नहीं होगी, बल्कि कार्य और भी अधिक सुन्दर ढंग से सम्पन्न होंगे। ईश्वर की ओर मन लगाए रखने पर मन में स्वार्थपरता नहीं आएगी। और कार्य जब निःस्वार्थ भाव से किया जाएगा तब कार्य यथोचित होगा। इसके लिए जरूरत है एक आग्रही मन की, जो भगवान का चिन्तन करना चाहेगा, इसके लिए चेष्टा करेगा। इसका अभ्यास करना होगा। किसी खास समय ध्यान करने बैठा, कुछ देर चेष्टा की, अच्छा नहीं लगा, उठ गया। इससे काम नहीं चलेगा। असली बात है, ईश्वर के काम में रुचि होने की आवश्यकता। किन्तु रुचि कैसे होगी ? अरुचिकर को रुचिकर बनाने के लिए मन को उस ओर संचालित करने की चेष्टा करनी होगी। चेष्टा करते–करते धीरे–धीरे रुचि आती है।

किसी व्यक्ति ने श्रीरामकृष्ण जी से कहा, ''संसारी लोगों की क्या कोई गति नहीं ?'' 'संसारी' कहने का अर्थ केवल वे ही नहीं जो विवाह करके गृहस्थ हुए हैं बल्कि जो भी संसार को लेकर लिप्त हैं, उनकी बात कहते है। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, उपाय है क्यों नहीं ? अवश्य ही है। इसका उपाय है– 1. ईश्वर के नाम का गान करना, 2. साधुसंग करना और 3. बीच–बीच में निर्जन में जाकर ईश्वर चिन्तन करना।

ईश्वर के नाम का गान करने का अर्थ है, ध्यान–जप, पूजा–अर्चना करना, देवस्थान जाना, देव सेवा के कार्य करना। ईश्वर चिन्तन करते–करते क्रमशः ईश्वर के प्रति अनुराग उत्पन्न होता है। छोटी लड़कियाँ गुड़िया लेकर खेलती हैं। गुड़ियों में कोई लड़का, कोई लड़की होती है। अनेक सम्बन्ध होते हैं। उन गुड़ियों को वे खिलाती हैं, कपड़े पहनाती हैं, सुलाती हैं और फिर गुड़िया टूट जाती है तो रोती हैं। खेलते–खेलते उन गुड़ियों के प्रति उन्हें प्रेम हो जाता है। हम लोगों की पूजा–अर्चना भी भगवान को लेकर मानो गुड़िया का खेल ही है। भगवान को जीवन्त मानने का बोध प्रारम्भ में नहीं होता, किन्तु इस तरह चेष्टा करते–करते क्रमशः वह बोध होता है।

श्रीरामकृष्ण ने कहा है, अनुराग उत्पन्न होने पर अनुराग रूपी बाघ काम–क्रोधादि को खा जाता है। अर्थात् अनुराग के फलस्वरूप ईश्वर के पथ पर जाने की बाधाएँ दूर हो जायेंगी। हमलोग कहते हैं कि संसार में

प्रबल बाधा है। प्रबल बाधा संसार में नहीं हमारे मन में है। मन में अनुराग का संचार होने पर कोई भी बाधा फिर प्रतिरोध नहीं कर पाती। भागवत में एक दृष्टांत है – गोपियाँ गृहकार्य में व्यस्त थीं। उसी समय वन से बाँसुरी की ध्वनि सुनाई पड़ी। भगवान का आवाहन अमोघ है। सब काम छोड़कर चल पड़ी। घर के कार्य में और मन नहीं लगता क्योंकि, मन तो भगवान की ओर चला गया है। किसी गोपी को घर में बन्द करके रख दिया गया है। भगवान के आवाहन पर वे जा नहीं पाती है। उसने सोचा, मेरे जाने के मार्ग में बाधा यह देह है। उसी समय देह त्याग करके वह भगवान के समीप चली गयी। ऐसा आकर्षण था कि शरीर तक उसे बाधा नहीं पहुँचा सका। इसी का नाम अनुराग है। एक गीत में है– ''लेत लेत यह हरिनाम उर में प्रेम–संकुल फूटेगा''

भगवान का नाम लेते–लेते, उनका चिन्तन करते करते और जीवन को उसी प्रकार परिचालित करने की चेष्टा करते–करते अनुराग आता है। भगवान के लिए व्याकुलता होने पर कोई बाधक तत्व फिर भक्त को रोक नहीं पाता। किसी ने श्रीरामकृष्ण जी से पूछा कि परिवार यदि भगवान की ओर जाने में बाधक हो तो क्या करूँगा ? श्रीरामकृष्ण ने कहा– ''उसे समझाकर अपने भाव में भावित करने की चेष्टा करना''। उस व्यक्ति ने फिर पूछा– ''यदि किसी प्रकार न माने तो क्या करूँगा'' ? श्रीरामकृष्ण ने कहा– ''देखो, जो भगवान के लिए व्याकुल होता है उसे वे (भगवान) सब कुछ अनुकूल कर देते हैं। ईश्वर से कातर होकर प्रार्थना करने पर वे समस्त प्रतिकूलताओं को दूर कर देते हैं, सारे बाधा विघ्न अनुकूल हो जाते हैं।

हम लागों के भीतर व्याकुलता है, किन्तु संसार की ओर मन को बिखेर देने के कारण वह दब गयी है। बिखरे हुए मन को समेट लेना बड़ा कठिन है। उसके लिए चेष्टा करने का नाम ही साधना है। जो मन संसार में बिखर गया है उसे क्रमशः खींच कर भगवान में स्थिर करने का प्रयास ही साधना है। यह अकस्मात् नहीं होता। धीरे–धीरे मन को विषय से विरत करना होगा, धैर्यपूर्वक करना होगा। इसके द्वारा मन क्रमशः भगवान की ओर जाएगा। और इसके साथ ही उस पथ पर जाने की प्रेरणा भी आएगी।

2. साधु–संग का अर्थ है जो भगवान का चिन्तन करते हैं, उनसे प्रीति करते हैं, उनका संग करना। संग करने का अर्थ उन लोगों के निकट जाकर बैठे रहना नहीं बल्कि उन लोगों के भावों को ग्रहण कर, उनकी दिनचर्या का अनुसरण करना है। जिनके निकट जाने से भगवद्भाव का स्फुरण हो वे ही साधु हैं। वे जिस भाव में निमग्न हैं, उनके सम्पर्क में जो लोग आते हैं उनके भीतर भी उसी भाव का संक्रमण होता है। साधु क्या कहते हैं, किस प्रकार जीवनयात्रा का निर्वाह करते हैं इत्यादि को देखकर उस पथ पर चलने की प्रेरणा और निर्देश का लाभ होता है।

श्रीरामकृष्ण ने तीसरा उपाय बताया है– बीच–बीच में निर्जन वास। संसार में बसकर अन्य चिन्तन करने को अवकाश नहीं मिलता। ईश्वर को भूलकर रहते–रहते हमलोगों को ऐसा अभ्यास हो गया है कि संसार के स्वरूप के संबन्ध में हमलोगों को अनुभूति नहीं है। इसी से निर्जन में जाकर हमें सोचना होगा कि जीवन का उद्देश्य क्या है ? गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं–

"अनित्यमसुखं लोकम् इमं प्राप्य भजस्व माम्"।

अर्थात् यह संसार अनित्य है, दुःखमय है, यहाँ आकर मेरा भजन करो। नित्य हम देखते हैं कि कितने लोग अपने आत्मीय स्वजन को खोकर दुःख से हाहाकार करते हैं, हम सोचते हैं कि उन लोगों को हुआ है, हमें नहीं होगा। अनित्यता का बोध नहीं होता। सुख में भी बोध नहीं होता ओर दुःख में भी नहीं। इसलिए निर्जन में जाकर जीवन के पन्नों को उलट–पलट कर देखकर यदि उसकी निस्सारता का चिन्तन करना सीख लें तभी हम ठीक–ठीक समझ पायेंगे कि जगत अनित्य है। संसार की नश्वरता और दुःखमयता का बोध होने पर संसार हम लोगों के मन को और आकृष्ट नही कर सकेगा। ऐसा नहीं कि सभी संसार को छोड़कर चले जायेंगे, किन्तु संसार के प्रति जिस तीव्र आसक्ति ने भगवान को भुला रखा है और यह आसक्ति संसार के भयावह रूप को समझने नहीं देती– जैसे गलित शव फूल से ढँका रहता है– इसे समझने पर संसार के प्रति मन का आकर्षण और नहीं होगा। इस प्रकार चेष्टा करने पर मन संसार में और निरत नहीं

रह पायेगा, ईश्वर के लिए व्याकुलता होगी। यह व्याकुलता जब आएगी तब हम लोगों को कोई संसार के सुख भोग में रोक कर रख नहीं पायेगा, हम तीव्र वेग से भगवान की ओर दौड़ पड़ेंगे।

(साभारः– प्रवचन स्वामी श्री भूतेशानन्द, रामकृष्ण मिशन द्वारा प्रकाशित पुस्तिका 'ईश्वर प्राप्ति के उपाय' से लिया गया)

वाणी का संयम

महर्षि व्यास ने महाभारत का अन्तिम श्लोक बोला। गणेश जी ने इसे लिख दिया। महर्षि बोले– ''हे विनायक! आपकी लेखनी धन्य है, आप धन्य हैं। लेकिन इससे भी बढ़कर है आपका मौन। मैं बोलता गया और आप लिखते गये। महाभारत लिखा गया। इस बीच आपने अपना मौन नहीं तोड़ा। मैं आपके श्रीमुख से एक शब्द सुनने के लिए तरस गया– इसका रहस्य क्या है ?

श्री गणेश जी बोले – ''ऋषिवर, आपने दीपक तो देखा ही है। किसी में तेल कम होता है और किसी में अधिक किन्तु ऐसा नहीं होता कि तेल अक्षय हो। दीपक के तेल की तरह ही हर प्राणी के प्राणों की शक्ति भी कम या ज़्यादा होती है। इसका अधिक से अधिक लाभ उठाने में ही समझदारी है। इसके लिए संयम का बड़ा महत्व है। संयम की पहली सीढ़ी है– वाणी पर संयम रखना। ऐसा न कर पाने पाला व्यक्ति कभी न कभी व्यर्थ की बात बोल ही देगा। यह फालतू बात एक दूसरे के मन में राग–द्वेष पैदा कर देती है। फालतू बोलना अनर्थकारी होता है। वाणी पर संयम का अभ्यास होने से इस अनर्थ से बचा जा सकता है। मेरा यही प्रयास रहा है कि मौन का सच्चा उपासक बना रहूँ।

गणेश जी की बातें सुनकर व्यास जी इतना ही कह पाये– ''हे गणपते! आप धन्य हैं। आपका मौन धन्य है। मैं कृतकृत्य हो गया।

अन्तकाल

श्रीमद्भागवद्गीता के अध्याय आठ के श्लोक 5 एवं 6 में 'अन्तकाल' का वर्णन आया है। गीता का कहना है कि अन्तिम घड़ी के जो विचार होंगे वैसा ही अगला जन्म होगा। अन्तिम घड़ी में भगवान में चित्त रम जाये तो मनुष्य जन्म–मरण के बन्धन से मुक्त हो जाये।

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः।।5।।
यं यं वाऽपि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः।।6।।

अन्तकाल में मुझे ही स्मरण करते–करते जो देह त्याग करता है वह मेरे स्वरूप को प्राप्त करता है – इसमें कोई सन्देह नहीं।।5।।

हे कौन्तेय! जिस–जिस भावना को स्मरण करते हुए मनुष्य अन्तकाल में शरीर को छोड़ता है, उस–उस भावना में रंगा होने के कारण वैसे ही कलेवर को प्राप्त होता है।।6।।

तत्पश्चात् श्लोक 7 एवं 8 में यूँ लिखा हैः–
तस्मसत्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युद्ध च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मा मे वैष्यस्य संशयम्।।7।।
अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नाऽन्यगामिना।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थाऽनुचिन्तयन्।।8।।

इसलिए सब कालों में मुझे स्मरण करता रह और (जीवन के संग्राम में) जूझता रह। इस प्रकार मुझमें बुद्धि अर्पित कर देने से तू निसन्देह मुझको ही प्राप्त होगा।।7।।

हे पार्थ जो व्यक्ति ''अभ्यास योग'' से चित्त को एकाग्र कर उसे कहीं दूसरी जगह भागने नहीं देता वह निरन्तर चिन्तन करने से दिव्य परम पुरुष को पा जाता है।।8।।

कई लोग कहा करते हैं कि अगर यही बात है कि ''अन्तिम घड़ी में भगवान में चित्त रम जाए तो मनुष्य जन्म–मरण के बन्धन से मुक्त हो

जाता है'' तो जन्म भर क्यों रूखा जीवन बिताया जाये, अन्तिम घड़ी में राम–राम जप लेंगे। मरते समय भगवान का स्मरण कर लेंगे, सारी आयु भगवान के ध्यान में क्यों लगायें ? इस शंका को गीताकार ने स्वयं उठाकर उसका उत्तर दिया है। मनुष्य जब चाहे जिस भावना को मन में लाकर खड़ा कर ले यह सम्भव नहीं है। अन्तकाल में वही भावना सामने आती है जिसका जीवन में सदा से अभ्यास रहता है, जिससे वह सारे जीवन में रंगा रहता है– 'तद्भावभावित'– उस भावना से सदा भावित रहता है। इसीलिए श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया है कि तू सब कालों में भगवान का स्मरण करता रह, उसका अभ्यास कर – 'अभ्यास योग युक्तेन चेतसा' अर्थात् ऐसा न समझ कि मृत्यु के समय जब चाहेगा भगवान का ध्यान कर लेगा। इस प्रकरण में श्री तिलक कहते हैं कि शास्त्रकार जीवनकाल की अपेक्षा मृत्युकाल को विशेष महत्वपूर्ण मानते हैं। शास्त्रों का कहना है कि जीवन में ब्रह्म तथा आत्मा की एकता का ज्ञान हो न हो, परन्तु अगर मृत्यु के समय यह ब्रह्म ज्ञान हो गया, इस ज्ञान में मनुष्य ने देह छोड़ी तो वह ब्रह्म में लीन हो जाता है। अन्यथा जो भाव मरणकाल में होगा, उसी भावना को लेकर जीव अगला जन्म धारण करता है। मरणकाल में ब्रह्म के स्मरण का अर्थ है कि सब संचित कर्मों का क्षय हो जाना– 'ज्ञानाग्निदग्ध ाकर्माणम्' अर्थात् ज्ञान की अग्नि में कर्मों का जल जाना। श्री तिलक का कहना है कि कर्म बने रहेंगे तो कर्म–फल के लिए जन्म–त्याग के समय ब्रह्म ज्ञान रहा तो उस ज्ञान में कर्म अग्नि में तिनके की तरह जल जाते हैं, उनका फल नहीं रहता, ज्ञानाग्नि ही रह जाती है।

'अन्तकाल' के महत्व को ईसाई धर्म में भी समझा जाता है। ईसाई लोग मरते समय पादरी को बुलाते हैं जो मृत्यु के शिकंजे में फँसे व्यक्ति को पापों से छुड़ाता है। हिन्दु धर्म में तीर्थ स्थान पर जाकर प्राण छोड़ना महत्वपूर्ण इसीलिए समझा जाता है, क्योंकि अन्त समय को वे ईश्वर के साथ जोड़ देना चाहते हैं।

'अन्तकाल' की व्याख्या श्री सातवलेकर ने की है। यह व्याख्या अधिक माकूल प्रतीत होती है। उनका कहना है कि जीवन में अन्त तो हर क्षण हो रहा है, पहला क्षण बीता, उसका अन्त हुआ तभी दूसरा क्षण आता है, वह बीता तब तीसरा क्षण आता है। इस प्रकार क्षण का अन्त होता है, दिन का अन्त होता है, अवस्था का अन्त होता है और फिर देह का अन्त हो जाता है। गीता का कहना है कि प्रत्येक प्रकार के अन्त में जो भगवान का स्मरण करता है वह भगवान को ही प्राप्त होता है। जो इस प्रकार हर तरह के अन्त में भगवान का स्मरण करता है उसे तो भगवान के स्मरण का अभ्यास ही हो जायेगा, इसी को गीता ने 'अभ्यास योग युक्तेन चेतसा' कहा है। जो प्रत्येक क्षण को जीवन का अन्त समझकर नहीं चलता उसे क्या पता है कि किस क्षण जीवन का अन्त आ जाये ? जीवन का अन्त कोई ऐलान करके तो आता नहीं। बैठे-बिठाये लोग चल देते हैं। इस कारण यही उचित है कि हम जीवन के प्रत्येक क्षण को जीवन का अन्त समझकर भगवान का स्मरण करें। ऐसा करने से मृत्यु के समय ब्रह्म ही हमारे ध्यान में होगा और साधक ब्रह्म में लीन हो जायेगा। श्री तिलक के कथानुसार उसके कर्म अपने आप ज्ञानाग्नि से दग्ध हो जायेंगे, उसके कर्म जल जाने के कारण उसके बन्धन का कारण नहीं बनेंगे।

-श्री भुवनेश्वर नाथ वर्मा, भभुआ

अनमोल वचन

तुम जो कुछ देते हो, वही तुम्हारे पास अनन्तगुणा होकर लौट आता है। इस समय तुम्हारे पास सुख-दुख, लाभ-हानि जो कुछ भी है, वह तुम्हारे ही पहले दिये हुए का फल है।

विवेक विचार

सच्चा वैष्णव

सच्चा वैष्णव वही है जो कभी किसी बात की चिन्ता नहीं करता। मेरे यहाँ ठाकुर जी विराजे हैं, मेरे पिताजी विराजे हैं, फिर मुझे किस बात की चिन्ता ? ऐसा भाव सच्चा वैष्णव अपने मन में रखता है। महाप्रभु चैतन्य ने इसीलिए कहा है– ''चिन्ता काऽपि न कार्या''। महाभारत के युद्ध में इस सम्बन्ध में एक प्रसंग आता है।

आठ दिनों से भीष्म पितामह युद्ध कर रहें हैं किन्तु पाण्डवों को नहीं हरा सके हैं। दुर्योधन ने पितामह पर व्यंग किया ''आपको तो पाण्डव अधिक प्रिय हैं, इसीलिए आप उनको खेल खिला रहे हैं, मारते नहीं।'' भीष्म पितामह को यह बात बुरी लगी। उन्होंने तुरन्त प्रतिज्ञा की ''कल या तो मैं अर्जुन को मार डालूँगा या स्वयं मर जाऊँगा।'' यह भीष्म की प्रतिज्ञा थी अतः सभी घबराये। भगवान श्रीकृष्ण को भी बेचैनी हो गई। रात को नींद नहीं आई। भीष्म की प्रतिज्ञा सुनकर तो बेचारे अर्जुन की दशा ही बिगड़ गई होगी, ऐसा विचार करके श्रीकृष्ण सांत्वना देने के लिए अर्जुन के शिविर में गये। वहाँ जाकर देखा तो अर्जुन को बड़ी गहरी नींद में सोता पाया। भगवान को लगा कि गज़ब है। भीष्म ने ऐसी भीषण प्रतिज्ञा की फिर भी अर्जुन तो बड़ी शान्ति से सो रहा है, ज़रा भी चिन्ता नहीं है। उन्होंने अर्जुन को जगाया। अर्जुन बड़ी शान्ति से उठा। भगवान ने पूछा ''तुमने भीष्म की प्रतिज्ञा सुनी है न ?'' अर्जुन बोला, ''केशव! हाँ सुन ली है।'' कृष्ण भगवान ने कहा ''और तुम शान्ति से सो रहे हो''। तुम्हें मृत्यु से डर नहीं लगता।'' अर्जुन बोला, ''मेरी चिन्ता करने वाला मेरा स्वामी जाग रहा है तो मुझे भला फिक्र करने की क्या आवश्यकता ? मैं क्यों चिन्ता करूँ और व्यर्थ ही अपनी नींद हराम करूँ ?''

अर्जुन सच्चा वैष्णव था। परमात्मा में जिसका इतना सच्चा विश्वास होता है वो ही सच्चा वैष्णव कहलाता है। घर में भगवान विराज रहे हों और कोई चिन्ता करे तो उन्हें बुरा लगता है कि मैं बैठा हूँ तो भी यह चिन्ता करता है। तुम अपनी चिन्ता को अपने इष्ट के चरणों में सौंप दो। सच्चे वैष्णव का यही लक्षण है।

– श्री भजन शंकर, गुड़गांव

शोक समाचार

सखेद सूचना दी जाती है कि पिछले वर्ष रामाश्रम सत्संग के जिन बहन–भाइयों का देहावसान हो गया है उनकी सूची इस प्रकार है :–

1. देवघर के श्री फकीर राम के पिता श्री विदेश राम का दिनांक 27.7.2017 को
2. हाजीपुर के श्री सच्चिदानन्द सिन्हा का दिनांक 12.6.2017 को
3. **सीतामढ़ी के –**
   - अमरिन्दर कुमार की माताजी श्रीमती आनन्दी देवी जो 80 वर्ष की थी, का 18.3.2017 को
   - सुरिन्दर कुमार की दादी का जो 101 वर्ष की थीं
4. **भभुआ के**
   - श्री विक्रम प्रसाद श्रीवास्तव की धर्मपत्नी श्रीमती रामनन्दी देवी का 19.5.2017 को
   - श्री गणेश सिंह (एडवाकेट) का 17.5.2017 को
   - श्री ठाकुर प्रसाद जायसवाल का 88 वर्ष की आयु में 23.5.2017 को
   - प्रदीप कुमार टेकरीवाल का 12.7.2017 को
   - मदन बाबू के दामाद श्री दिव्य प्रकाश का 27.5.17 को
   - मालती कुमार का 24.7.2017 को
5. **दिल्ली के**
   - उदय राज शर्मा के पिताजी श्री कृष्ण शर्मा का 20.11.2016 को
   - अमूल्य घोष के पिताजी श्री गौड़ चन्द्र घोष का 6.10.2016 को, आप भागलपुर के सेन्टर इन्चार्ज थे
   - स्वर्गीय श्री साधुरामजी की पत्नी श्रीमती श्यामा का 4.3.2017 को
   - पूज्य गुरुदेव डा. शक्ति कुमार जी के सबसे छोटे भ्राता श्री विजय सक्सेना (शेखर भाई साहब) का 22.7.2017 को

- ग़ाज़ियाबाद के वरिष्ठ सत्संगी श्री विनोद दुआ जी का 9.9.2017 को

6. **वाराणसी के** श्री राधे श्यामजी का 8.12.2016 को
7. **मोतीहारी के**
   - श्री हरि शंकर प्रसाद श्रीवास्तव का 7.1.2016 को
   - मोहनेन्द्र किशोर सिन्हा (बइहरवा फतेहमुहम्मद निवासी) का दिनांक 23.2.2017 को
8. रवीन्द्र कुमार (ददन जी, मुम्बई) की पत्नी श्रीमती आरती श्रीवास्तव का 27.7.2017 को
9. **झुंझुनु के**
   - श्री हरबन्शलाल भायला जी का 13.5.2017 को
   - श्री बन्सीधर टेलर का 29.6.2017 को
   - श्रीमती शान्ति कुंवर का 1.7.2017 को

बैरागी का आशीर्वाद

पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर की किशोरावस्था में ही गायन की ओर रुचि पैदा हो गई। एक बार वह नेमिनाथ शिखर को पार कर गुरु दत्तात्रेय की तपःस्थली के दर्शन के लिए गए। रास्ते में एक वृक्ष के नीचे बैठकर उन्होंने संगीत के स्वर बिखेरने शुरू कर दिए। अचानक उन्होंने देखा कि एक बैरागी उनका गायन सुन रहा है और उस पर ताल भी दे रहा है। विष्णु ने पास जाकर व्यंग्य से कहा, 'गायन के संबंध में कुछ समझते भी हो या केवल ताल ठोंक रहे हो?' साधु ने कहा 'गायन के बारे में बहुत थोड़ा जानता हूं। मैं तुम्हारी बराबरी कैसे कर सकता हूं?'

बैरागी उठा और अपनी मस्ती में गाता हुआ आगे बढ़ गया। कुछ देर तक विश्राम करने के बाद विष्णु आगे की ओर बढ़े। आगे बढ़ने पर उन्हें एक मंदिर के अंदर से गायन की सुमधुर लहरी सुनाई दी। वह मंदिर के अंदर पहुंचे तो देखा कि वही साधु देवी की मूर्ति के आगे बैठकर गीत गा रहा है। विष्णु स्तब्ध रह गए। बैरागी के चरण पकड़कर उन्होंने कहा, 'बाबा मुझे क्षमा करें। अंहकार में आकर मैं आपका निरादर कर बैठा।'

साधु ने कहा, 'तुम अहंकार का त्याग कर विनम्रतापूर्वक भक्ति के गीत गाओ। गायन के लिए स्वरों में मधुरता चाहिए। एक दिन राष्ट्र के अग्रणी गायकों में गिने जाओगे।' बैरागी के शब्दों ने विष्णु जी का हृदय परिवर्तन कर दिया। बाद में उन्होंने गंधर्व महाविद्यालय की भी स्थापना की।

भगवान को पुकारो

स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने एक दिन श्रद्धालु जनों को उपदेश देते हुए कहा, 'प्रत्येक प्राणी में ईश्वर के दर्शन करने चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को अपना हृदय मंदिर के समान पवित्र रखना चाहिए।'

एक गृहस्थ सज्जन ने उपदेश सुनने के बाद परमहंस जी से विनम्रता से पूछा, 'महाराज, प्रत्येक प्राणी में ईश्वर का निवास कैसे हो सकता है? मैं सांसारिक व्यक्ति हूँ जाने–अनजाने पाप होते रहते हैं। कोई मुझमें ईश्वर देखने लगे तो यह कैसे उचित होगा?' स्वामी जी ने कहा, 'अपने अंदर पाप ही क्यों देखते हो? क्या गृहस्थ और सांसारिक व्यक्तियों पर भगवान की कृपा नहीं होती? हमारे देश में ऐसे अनेक गृहस्थ हुए हैं, जिन्होंने पारिवारिक कर्तव्यों का पालन करते हुए सदाचार का जीवन बिताया और भगवान के दर्शन किए। जिसने दुर्गुणों को त्यागकर खुद को भगवान के सामने अर्पित कर दिया, वह स्वयं भगवान के समान पवित्र बन गया।'

स्वामी जी ने आगे कहा, 'अबोध शिशु जब रो–रोकर मां–मां की रट लगाता है, तो मां दौड़ी चली आती है और बालक को गोद में उठा लेती है। वह यह नहीं देखती कि बालक गंदा तो नहीं है। भगवान तो माताओं की भी माता हैं। यदि भक्त सच्चे हृदय से प्रार्थना करता रहे, तो वह दौड़े चले आते हैं। शर्त यही है कि शुद्ध हृदय से प्रार्थना करना चाहिए। प्राणी मात्र के प्रति यदि प्रेम पनपने लगे, तो समझो कि भक्ति पथ पर बढ़ने लगे हों। परमहंस जी की बातें सुनकर जिज्ञासु की समस्या का समाधान हो गया।

राम संदेश के नियम

1. आध्यात्मिक विद्या के गुप्त और अनुभवी रहस्यों तथा सदाचार–शिक्षा को सरल भाषा में जनता तक पहुँचाना हमारी राम सन्देश पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है।
2. राम–सन्देश में आत्मिक, नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के लेख ही छपते हैं, राजनैतिक या रोमांचक लेख नहीं। रचनाओं में काट–छाँट करने अथवा छापने या न छापने की स्वतंत्रता सम्पादक को है।
3. राम सन्देश का वर्ष जनवरी में आरम्भ होता है। वार्षिक चन्दा 20 (बीस) रुपये है। एक वर्ष से कम तथा आजीवन ग्राहक नहीं बनाये जाते। चन्दा दशहरा भंडारों में या मैनेजर, राम संदेश को, 9–रामाकृष्णा कॉलोनी, जी. टी. रोड, ग़ाजियाबाद (उ.प्र.) 201009 के पते पर दिसम्बर के अंत तक अवश्य भिजवा दें।
4. राम सन्देश डाक द्वारा नहीं भेजा जाता है। इसका वितरण भंडारों पर ही किया जाता है। कृपया अपनी प्रति लेना न भूलें।

राम संदेश

रजिस्टर्ड ऑफिस

9–रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड,
गाज़ियाबाद–201009

मुद्रक, प्रकाशक व संपादक : डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना

मुद्रण : अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, बी–66, सैक्टर–6, नोएडा–201301